

ॐ १८ सतिगुर प्रसादि ॥ ॐ
गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक गुरमति ज्ञान

फाल्गुण-चेत, संवत् नानकशाही ५४९-५०
वर्ष ११ अंक ७ मार्च 2018

मुख्य संपादक : सिमरजीत सिंह
संपादक : सतविंदर सिंह फूलपुर
सहायक संपादक : जगजीत सिंह

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)

श्री अमृतसर साहिब-१४३००६

फोन : 0183-2553956-60

एक्सटेंशन नंबर

वितरण विभाग 303 संपादकीय विभाग 304

फैक्स : 0183-2553919

e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net



ISSN 2394-8485

विषय-सूची

गुरबाणी विचार	४
संपादकीय	६
श्री गुरु ग्रंथ साहिब तथा विश्व-भाईचारा	८
-डॉ कुलवंत सिंह	
सिक्ख चढ़दी कला का प्रतीक : होला महल्ला	११
-डॉ रूप सिंह	
आजु हमारै बने फाग	१४
-डॉ सत्येंद्र पाल सिंह	
गुरुद्वारा : संकल्प और व्यवहार	१९
-सतविंदर सिंह फूलपुर	
शहीद भाई सुबेग सिंह-भाई शाहबाज़ सिंह	२३
-स. बलविंदर सिंह जौड़ासिंघा	
सरदार बघेल सिंह	२७
-डॉ हरबंस सिंह	
.. जरनैल सरदार बघेल सिंह करोड़ासिंघिया	४०
-डॉ राजेंद्र सिंह 'साहिल'	
गदरी बाबा स. जगत सिंह सुरसिंह	४४
-डॉ अमरजीत कौर	
सो किउ मंदा आखीऐ . . .	४७
-डॉ रुपिंदर कौर	
खबरनामा	४९

गुरबाणी विचार

चेति गोविंदु अराधीऐ होवै अनंदु घणा ॥
 संत जना मिलि पाईऐ रसना नामु भणा ॥
 जिनि पाइआ प्रभु आपणा आए तिसहि गणा ॥
 इकु खिनु तिसु बिनु जीवणा बिरथा जनमु जणा ॥
 जलि थलि महीअलि पूरिआ रविआ विचि वणा ॥
 सो प्रभु चिति न आवई कितड़ा दुखु गणा ॥
 जिनी राविआ सो प्रभु तिना भागु मणा ॥
 हरि दरसन कंउ मनु लोचदा नानक पिआस मना ॥
 चेति मिलाए सो प्रभु तिस कै पाइ लगा ॥२॥

(पन्ना १३३)

पंचम सतिगुरु श्री गुरु अरजन देव जी महाराज बारह माहा मांझ की इस पावन पउड़ी में चेत्र मास की ऋतु और इससे संबंधित क्रियाओं के बारे में सांकेतिक वर्णन करते हुए मनुष्य-मात्र को मनुष्य जीवन रूपी वर्ष के इस कालखंड को प्रभु-नाम-चिंतन-मनन द्वारा सफल करने का निर्मल उपदेश देते हुए गुरमति मार्ग बख्शिश करते हैं।

सतिगुरु जी कथन करते हैं कि चेत्र मास में मालिक परमात्मा को स्मरण किया जाए तो बहुत ही गहरी प्रसन्नता मिलती है। इस समय यदि जिह्वा से अच्छे मनुष्यों की संगत करते हुए प्रभु-नाम जपा जाए तो मालिक स्वामी प्राप्त हो जाते हैं। जिसने ऐसा सुकर्म कर प्रभु को पा लिया है उसी मनुष्य का इस संसार में आया सफल गिना जाए, चूंकि मनुष्य-जीवन का मूल प्रयोजन यही है :

भई परापति मानुख देहुरीआ ॥
 गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥
 अवरि काज तेरै कितै न काम ॥
 मिलु साधसंगति भजु केवल नाम ॥

(पन्ना ११)

गुरु पातशाह हरेक क्षण प्रभु-नाम को समर्पित करने का दिशा-निर्देश बख्शिश करते हुए फरमान करते हैं कि परमात्मा की पावन सृष्टि के बगैर यदि एक पल भी जीया जाए तो सारा जीवन ही व्यर्थ हो जाता है। जो परमात्मा जल में, पुलाड़ में, आकाश में व्याप्त हो रहा है, यदि ऐसा मालिक मनुष्य को याद ही न आए तो उसका कितना दुख होगा! दूसरी ओर जिन्होंने परमात्मा को याद किया है वे बहुत ही भाग्यशाली अथवा महान हैं। ऐसे सुजनों को देखकर मन परमात्मा के दीदार की इच्छा की कामना करता है, मन में

उसके दीदार की प्यास बनी रहती है। चेत्र मास में जो मुझको परमात्मा से मिला दे मैं उसके चरण छू लूं!

बारह माहा मांझ की पहली पावन पउड़ी, जिससे यह पावन बाणी प्रारंभ होती है, यूं है :

किरति करम के वीछुड़े करि किरपा मेलहु राम ॥

चारि कुंट दह दिस भ्रमे थकि आए प्रभ की साम ॥

धेनु दुधै ते बाहरी कितै न आवै काम ॥

जल बिनु साख कुमलावती उपजहि नाही दाम ॥

हरि नाह न मिलीऐ साजनै कत पाईऐ बिसराम ॥

जितु घरि हरि कंतु न प्रगटई भठि नगर से ग्राम ॥

स्रब सीगार तंबोल रस सणु देही सभ खाम ॥

प्रभ सुआमी कंत विहणीआ मीत सजण सभि जाम ॥

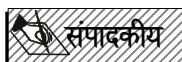
नानक की बेनंतीआ करि किरपा दीजै नामु ॥

हरि मेलहु सुआमी संगि प्रभ जिस का निहचल धाम ॥१॥

(पन्ना १३३)

अर्थात् हे परमात्मा! हम मनुष्य अपने कर्मों की कमाई के अनुसार अर्थात् सुकर्मों को निभाने में कुछ कमी रह जाने के कारण आपसे बिछुड़े हुए हैं। सनम्र विनती है कि आप हमें अपनी कृपा करके अपने साथ मिला लो। चारों ओर तथा दसों दिशाओं में भटकने के उपरांत हम अंत में आपकी शरण में आए हैं। दूध देने से रहित गाय किसी काम नहीं आती। जल न मिले तो वृक्ष अथवा पौधा सूख जाता है। यदि असल मित्र-प्रभु का नाम ही न मिल पाया तो आराम कहाँ? जिस घर अथवा हृदय में प्रभु-पति नहीं प्रकट होते वह घर अथवा हृदय भट्ठी जैसी दुखदायक प्रतीति देता है। प्रभु मालिक के बिना मनुष्य रूपी स्त्री का सारा शृंगार व्यर्थ है अथवा बाहरी दिखावे के सभी प्रयास निष्फल हैं। मालिक के बिना बाहरी रूप से मित्र दिखने वाले सभी जन शत्रु हैं। ऐसी स्थिति में हृदय से एक ही विनती निकलती है कि हे स्वामी! कृपा करके अपना नाम बख्श दो। हे मालिक! मुझे अपने साथ मिला लेना, क्योंकि एक आप ही का नाम सदैव स्थिर है।





खालसई न्यारेपन का प्रतीक : होला महल्ला

श्री गुरु नानक साहिब ने स्वस्थ जीवन-जाच के स्रोत सिक्ख धर्म की नींव रखी और अपना सारा जीवन समकालीन वैर-विरोधों, भ्रमों, फिजूल के कर्म-कांडों में फंसी जनता के कल्याण के लिए समर्पित कर दिया। गुरु जी ने भारतीय सभ्याचार और लोक-जीवन में आ चुके पतन को दूर करने का कार्य आरंभ किया। दस गुरु साहिबान ने अपने-अपने गुरु-काल में भारतीय सभ्याचार और लोक-जीवन को विशेष रूप से निखारा एवं संवारा। गुरु साहिबान का प्रथम उद्देश्य जगत-सुधार ही रहा।

भारतीय सभ्याचार में लोग होली का त्योहार सदियों से मनाते चले आ रहे हैं, जिसका संबंध फागुन महीने की सुहानी ऋतु के साथ है। इस ऋतु में सर्दी की ठंड के बाद सुख-आराम का अनुभव होता है।

होली के साथ परमात्मा के सच्चे भक्त प्रह्लाद और उसके क्रोधी व सख्त स्वभाव वाले पिता, जिसने उसे मौत की सज़ा दे दी थी, का लोकयानिक प्रसंग भी जुड़ा हुआ है। बुराई की हमेशा हार होती है और बुरा चाहने या करने वाले की जीवन-नैया हमेशा डूबती है। इसका स्पष्ट सबूत होली के साथ जुड़े प्रसंग के अनुसार हृण्यकश्यप और उसकी बहन होलिका की हार एवं प्रह्लाद की जीत से मिलता है। गुरबाणी का फरमान है :

हरि जुगु जुगु भगत उपाइआ पैज रखदा आइआ राम राजे ॥

हरणाखसु दुसटु हरि मारिआ प्रह्लादु तराइआ ॥

(पन्ना ४५१)

हृण्यकश्यप और होलिका की बुरी नीयत की हुई हार का लोगों द्वारा नाच कर और धूल आदि उड़ा कर जश्न मनाया गया, जो होली कहलाता है। सही सोच के धारकों ने इसमें एक-दूसरे पर रंग डालने को शामिल किया, तो होली का त्योहार रंगों के त्योहार के रूप में विकसित हो गया। मानवीय प्रकृति में गलत दिशा की तरफ जल्दी जाने का जो रुझान है, उसने रंगों को एक-दूसरे पर डाल कर, एक-दूसरे के साथ खुशियां बांटने की जगह अन्य कई तरह की गलत शरारतों को इसमें शामिल कर दिया, जिस कारण अत्यंत हानिकारक रासायनिक रंगों का प्रयोग होने लगा। धूल उड़ाना, कीचड़ फेंकना, टोलियां बना कर बाजारों में खड़े होकर राहियों को तंग करना होली का ज़रूरी अंग मान लिया गया।

जब साहिब-ए-कमाल श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने अपने जीवन-काल के दौरान लोगों को ऐसे भेदे ढंग के साथ होली मनाते देखा तो सिक्खों को होली के बदल के रूप में होला महल्ला के नाम से खालसई त्योहार बख्शिश किया। यह होला का पर्व होली की कुरीतियों से पूरी तरह से रहित तथा निर्मल है और इसको मनाने के लिए प्रचलित किया गया ढंग खालसा पंथ में बाहरी और आंतरिक दोनों रूप में वीर-रस का संचार करने वाली गुरमति भावना के अनुकूल भी है।

होला महल्ला गुरु जी की अपनी देख-रेख और नेतृत्व में खालसा पंथ की जन्म-भूमि श्री अनंदपुर साहिब की पवित्र धरती पर चेत्र सेदी एक, संवत् १७०० (१७५७ ई) को मनाया जाना आरंभ हुआ। अपनी खालसई फौज को चुस्त-दुरुस्त तथा सदा क्रियाशील रखने, उसको हर चुनौती का सामना करने को तैयार-बर-तैयार रहने के लिए और भी दृढ़ करने के उद्देश्य की पूर्ति करने हेतु गुरु जी ने होला महल्ला का न्यारा रूप पेश किया।

श्री गुरु गोबिंद सिंह जी द्वारा बख्शिश किए गए खालसई होला महल्ला की परंपरा को गुरु जी के साजे-निवाजे खालसा पंथ ने श्री अनंदपुर साहिब की धरती पर अमूल्य खजाने के रूप में संभालने के लिए हर संभव यत्न किया है। हर वर्ष फागुन के महीने में सिक्ख संगत बड़े उत्साह और श्रद्धा-भावना के साथ इंतज़ार करती है कि कब होला महल्ला का दिन आए और वो श्री अनंदपुर साहिब पहुंच कर साहिब-ए-कमाल श्री गुरु गोबिंद सिंह जी के पवित्र दरबार में हाज़री भरे। श्री अनंदपुर साहिब में होला महल्ला का नज़ारा ऐसा न्यारा होता है जो शब्दों में बयान करना मुश्किल है। इस नजारे की विलक्षणता को केवल देखने से ही महसूस किया जा सकता है।

आज देश के मौजूदा राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और नैतिक स्तर पर हालात काफी बड़ी चुनौतियों से भरे होने के कारण सुखदायक नहीं हैं। आज के दौर में हमारी सबसे बड़ी और अहम ज़रूरत परस्पर पंथक एकता तथा आपसी सद्भावना कायम रखना है। आज पंथ-विरोधी ताकतें सिक्ख पंथ की शक्ति को तार-तार करने के लिए एड़ी-चोटी का जोर लगा रही हैं। होला महल्ला को मनाते समय इन समकालीन चुनौतियों को आंखों से ओझल नहीं किया जाना चाहिए। हम सबको अपने मतभेद त्याग कर खालसई पर्वों में अपनी शमूलियत करके पंथक एकता-इत्तफाक का सबूत देना चाहिए। हम खालसई निशान के नीचे एकजुट होकर ही पंथक चुनौतियों का सामना करने के सक्षम हो सकेंगे और तभी हमारे खालसई पर्व मनाने सार्थक होंगे।



आजु हमारै बने फाग ॥ प्रभ संगी मिलि खेलन लाग ॥

होली कीनी संत सेव ॥ रंगु लागा अति लाल देव ॥२॥

मनु तनु मउलिओ अति अनूप ॥ सूकै नाही छाव धूप ॥

सगली रूती हरिआ होइ ॥ सद बसंत गुर मिले देव ॥३॥

बिरखु जमिओ है पारजात ॥ फूल लगे फल रतन भांति ॥

त्रिपति अघाने हरि गुणह गाइ ॥ जन नानक हरि हरि हरि धिआइ ॥४॥

(पन्ना ११८०)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब तथा विश्व-भाईचारा

-डॉ. कुलवंत सिंह*

श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब की संपादना करके १६०४ ई में श्री हरिमंदर साहिब में प्रकाश किया और विश्व-भाईचारे को बहुत बड़ा पैगाम दिया। वो पैगाम यह था :

नानक सतिगुरु ऐसा जाणीऐ

जो सभसै लए मिलाइ जीउ ॥ (पन्ना ७२)

उस समय समाज अलग-अलग जातियों, धर्मों एवं इलाकों के विषय पर बंटा हुआ था। इसके परिणामस्वरूप विदेशी हमलावरों के लिए विखंडित समाज को गुलाम बनाना बहुत आसान काम था। ऐसे अंधकार के समय भारतीय समाज की सदियों पुरानी पहचान खत्म होती जा रही थी। जर, जोरू व ज़मीन मालिकों के हाथ से निकलने लगे थे। धीरे-धीरे समूह भारत को अपना अस्तित्व खोता हुआ अनुभव हुआ। इस संकटमयी स्थिति का मुकाबला करने के लिए संत परंपरा ने जन्म लिया। विभिन्न क्षेत्रों के संतों, भक्तों ने धर्म एवं जाति के नाम पर पैदा हुए विभाजनों को दूर कर समूह भारत में सर्वसांझा समाज निर्मित करने हेतु आवाज़ बुलंद की और मानव-मूल्यों की प्रमुखता को स्वीकार करने पर ज़ोर दिया। दक्षिण से उठी भक्ति लहर उत्तर दिशा में भी फैल गई। गुरु-परंपरा इस परंपरा से चाहे पूरी तरह से प्रभावित नहीं थी; गुरु-परंपरा एवं संस्था के अलग आधार थे, मगर समय की

परिस्थितियां सांझी थीं। उत्तरी भारत विशेषतः पंजाब की धरती विदेशी हमलावरों द्वारा पूरी तरह से रौंदी जा चुकी थी और यहां के सभ्याचार को पूरी तरह से खत्म करने की नीति चल रही थी, जबकि दक्षिणी भारत का सभ्याचार ऐसे संताप से आज़ाद था। धर्म की हिफाजत करना तथा जुल्म को रोकना पंजाबियों के लिए अति आवश्यक हो गया था। श्री गुरु नानक देव जी की सारी बाणी इसी केंद्रीय सूत्र के गिर्द घूमती है।

गुरुबाणी का इंकलाबी सुर (स्वर) आध्यात्मिक पक्षों के साथ मिलकर पेश हुआ। आत्मिक आज़ादी को तभी संभव माना जाता है जब तक मनुष्य अपने सामाजिक जीवन में पूरी तरह से आज़ाद नहीं हो जाता। श्री गुरु नानक साहिब ने इस पक्ष से पहलकदमी की और गुरु-परंपरा के लिए उन आदर्शों को प्राथमिकता दी जो मानव-मुक्त समाज सृजित करने हेतु आवश्यक थे। बाणी का इंकलाबी सुर पराधीन रहने वाले युग की स्थापति के खिलाफ़ है। वो सरकार, जो मानवता को दबाकर रखना चाहती है; वो समाज, जो सीनाज़ोरी से प्रजा को गुलाम बनाकर रखना चाहता है, गुरुबाणी उसका खुलेआम विरोध करती है। गुरुबाणी का सुर ऐसे धार्मिक प्रपंच के भी खिलाफ़ है जो परलोक के नाम पर जनता को अंधविश्वास एवं कर्मकांड की ओर धकेलता है।

*६५, कबीर पार्क, जी टी रोड, श्री अमृतसर साहिब-१४३००५

श्री गुरु नानक देव जी ने सोई हुई प्रजा को जगाया, अज्ञानता के कुएं में से बाहर निकाला और हकों की प्राप्ति के लिए सुचेत किया; साधारण मनुष्य को आवाज़ बुलंद करने की हिम्मत बख्शी ताकि बाबर जैसे हमलावर को खबर हो सके। गुरु साहिब ने उन लोगों को फटकार लगाई जो विदेशी हाकिमों को खुश करने के लिए उनके खाने, पीने, पहनने तथा बोलचाल की भाषा को अपना व्यवहार बनाकर मतलब हल करना चाहते थे अथवा अपनी भाषा एवं सभ्यचार का त्रिस्कार करके हाकिम श्रेणी के निकट आना चाहते थे :

—नील बसत्र ले कपड़े पहिरे

तुरक पठाणी अमलु कीआ ॥ (पन्ना ४७०)

—अंतरि पूजा पड़हि कतेबा संजमु तुरका भाई ॥

(पन्ना ४७१)

गुरु साहिब ने अज्ञानहीन प्रजा को झकझोरा और कहा कि यूं इज्जत-मान गंवा कर जीना मर जाने से भी बदतर है :

जे जीवै पति लथी जाइ ॥

सभु हराम जेता किछु खाइ ॥ (पन्ना १४२)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की समूची बाणी स्वाधीन एवं मानव-मूल्यों पर आधारित समाज सृजित करने की तरफदारी करती है। मानव-मुक्ति वाले समाज की स्थापना करने के लिए गुरुबाणी समूह विश्व को प्रेरित करती है। विश्व के कोने-कोने में जहां भी प्रजा पर अत्याचार हो रहा है या प्रशासन द्वारा दमन-वृत्ति अपनाई जा रही है, गुरुबाणी उसका डटकर विरोध करती है। गुरुबाणी समूह प्रजा के भले के लिए मानव-कल्याण वाले नैतिक विधान का समर्थन करती है।

आधुनिक समाज में मनुष्य की सारी

दौड़ सांसारिक वस्तुओं को एकत्र करने में तथा उसका उपभोग करने की तरफ लगी हुई है। मनुष्य में से मानवता गायब है। माया के प्रभाव के कारण मनुष्य का लक्ष्य केवल धन-प्राप्ति तक ही सीमित है। सदाचार, सहानुभूति एवं इंसानियत वाली भावनाएं मनुष्य में से पंख लगाकर उड़ चुकी हैं। व्यवहारिक स्तर वस्तु-व्यवहार तक ही सीमित रह गया है। गुरुबाणी माया-जाल से मुक्ति पाने के लिए मनुष्य को प्रेरित करती है और नेकी, नरमी, सहानुभूति जैसे सद्गुणों को धारण करने के लिए प्रेरित करती है। गुरुबाणी में सबसे ज्यादा बल इंसान को इंसानियत के साथ जोड़ने पर दिया गया है।

स्त्री-कल्याण का नारा आज विश्व-जगत का सर्वोच्च उद्देश्य है। संसार में पुरुष स्त्री को अपने अधीन समझता आया है। किसी भी समाज में स्त्री को स्वतंत्र जीवन जीने की छूट नहीं मिली। इस संदर्भ में श्री गुरु नानक देव जी ने बुलंद स्वर में स्त्री को आज़ादी दिलाने के लिए आवाज़ उठाई :

सो किउ मंदा आखीऐ जितु जंमहि राजान ॥
(पन्ना ४७३)

शेष गुरु साहिबान ने भी स्त्री को समाज में पुरुष के बराबर सम्मान दिलाया। श्री गुरु अमरदास जी ने सिक्ख धर्म के प्रचार में सिक्ख स्त्रियों को भी प्रचारक की उपाधि बख्शी। श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने अमृत छकाते समय माता जीतो जी की शमूलियत करवाकर स्त्री वर्ग को समानता देने में एक कदम और आगे बढ़ाया। परिणामस्वरूप सिक्ख इतिहास सिक्ख स्त्रियों के अलग-अलग उच्च कद्दावर कारनामों से भरा हुआ है। माता खीवी जी लंगर की प्रथा को

उच्च स्तर प्रदान करने के कारण प्रसिद्ध हैं। माता भागो जी, रानी साहिब कौर (पटियाला) तथा महारानी सदा कौर (बटाला) सिक्ख वीरांगनाओं के रूप में उभर कर सम्मुख आए चरित्र हैं।

विश्व में समाज की बांट अनेक पक्षों से हुई है और आज भी हीन भावना के साथ जुड़कर मानव समाज को किसी न किसी प्रकार बांटा जा रहा है। एशिया में जन्म, जाति पर आधारित विभिन्नता आज भी कायम है, चाहे इसकी पकड़ मध्य काल जैसी नहीं रही। आर्थिक विभिन्नताओं के पक्ष से यूरोप एवं शेष देशों में एशिया व मध्य एशिया के लोगों को 'थर्ड वर्ड' कहकर उनका त्रिस्कार किया जाता है। अमेरिकन नीग्रो काले होने का जो संताप झेल रहे हैं वो सारे संसार के सामने है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब इस भेदभाव के खिलाफ आवाज़ उठाने वाला पहला पावन ग्रंथ है। सिक्खी सिद्धांतों में समूह मानवता की बराबरी मानी गई है। सिक्ख धर्म 'दलितों' का भी संगी-साथी है :

नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु ॥
नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ
रीस ॥ (पन्ना १५)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की विचारधारा के नक्शे-कदम पर चलकर श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने पांच प्यारों की स्थापना की। सब श्रेणी के लोगों को एक समान खंडे का अमृत छकाकर समानता का मान बख्शा। समूह भाईचारे को एक हो जाने का आदेश दिया। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज भक्त कबीर जी की बाणी इस मसले के प्रति बहुत सख्त तर्क पेश करती है। भक्त कबीर जी फरमान करते

हैं कि तथाकथित उच्च श्रेणी के लोगों (पंडितों) का जन्म शेष मनुष्यों की भांति ही हुआ है। सबके शरीर में एक जैसा खून हरकत करता है। किसी तथाकथित उच्च जाति के मनुष्य के शरीर में खून की जगह अलग वस्तु हरकत नहीं कर रही। इसी नियम पर पहरा देते हुए श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब की संपादना करते समय भारत के अलग-अलग धर्मों, क्षेत्रों एवं वर्गों के संतों-भक्तों की बाणी को इस पावन ग्रंथ में शामिल किया। इस इंकलाबी व्यवहार से मानवता को 'एक' के आदर्श में बांधने वाला अन्य कोई अलग व्यवहार संसार के धार्मिक ग्रंथों में देखने में नहीं आया। श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के संपादन-कार्य में संकल्प एवं व्यवहार का इंकलाबी मिश्रण है; कथनी और करनी आपस में एक-सुर हैं।

अंत में मैं यही कहना चाहूंगा कि विश्व में जो तनावपूर्ण समस्याएं नज़र आ रही हैं, उनके हल के लिए श्री गुरु ग्रंथ साहिब में ठोस एवं योग्य प्रयास बताए गए हैं। आवश्यकता है, श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज शिक्षाओं को व्यवहारिक स्तर पर अपनाने की और इनका प्रचार विशाल रूप से विश्व स्तर पर करने की। ☀

सिक्ख चढ़दी कला का प्रतीक : होला महल्ला

-डॉ रूप सिंघ*

होला महल्ला सिक्खों का अहम दिवस है जो कि होली से अगले दिन मनाया जाता है। सिक्ख होली के परंपरागत रूप को स्वीकार नहीं करता, क्योंकि लोगों ने एक-दूसरे पर रंग व गंदगी फेंकने, हुड़दंग मचाने, शराब पीने, मंदा बोलने आदि घटिया हरकतों को होली का अंग समझ रखा है। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इस त्योहार को नए तरीके से मनाना शुरू किया। उन्होंने हिंदोस्तानी लोगों के सोए हुए स्वाभिमान को जगा कर, उनके मन में चढ़दी कला का एहसास पैदा करने के लिए होली को होला महल्ला के रूप में मनाने की रीति चलाई। चेत्र वदी एकम, संवत् १७५७ (१७०० ई) को दसम् पातशाह ने श्री अनंदपुर साहिब में होलगढ़ नामक स्थान पर पहली बार होला मोहल्ला मनाया। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि सिक्खों के दसवें गुरु श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने होला महल्ला को स्वतंत्र सिक्ख सोच के अनुसार मनाने का आरंभ खालसा पंथ की सृजना के तुरंत बाद किया, जिससे खुदमुख्तार खालसा अपने विलक्षण अस्तित्व के अनुसार पंजाबी सभ्याचार से संबंधित दिवस निराले रूप में मनाकर अपने स्वतंत्र अस्तित्व और न्यारेपन का प्रकटावा कर सके। गुरदेव का आशय पंजाबियों के मन में से गुलामी के अंश को जड़ से खत्म करना था, ताकि वे सोच-विचार और व्यवहार में स्वतंत्र होकर विचरण कर सकें।

७०० वर्ष से गुलाम, निर्बल, कमज़ोर,

साहसहीन और गुलाम मानसिकता के आदी हो चुके भारतीयों में जब्र-जुल्म के खिलाफ लड़ने-मरने की शक्ति भरने के लिए गुरदेव पिता द्वारा उठाया गया यह ऐतिहासिक इंकलाबी कदम था। होली भारत का मौसमी त्योहार है जो बसंत-बहार के आगमन की खुशी में मनाना शुरू हुआ। मौसम परिवर्तन के कारण सब तरफ वैरानगी और पतझड़ होती है। मौसम के बदल जाने से सारी कुदरत अपने नये रंग में रंग जाती है। प्राकृतिक प्रस्फुटन, सुंदरता और मौसमी रंगों का आनंद लेने व प्रकृति के हर्षित होने को खुशआमदीद कहने के लिए होली का दिन खुशियों के रूप में मनाना शुरू किया गया होगा।

होली से संबंधित प्राचीन कथा के अनुसार हृण्यकश्यप ने अपने पुत्र प्रह्लाद को सबक सिखाने के लिए योजना बनाई कि प्रह्लाद को आग में जलाया जाए। कहा जाता है कि हृण्यकश्यप की बहन होलिका को वर प्राप्त था कि उसे अग्नि नहीं जलाएगी, इसलिए हृण्यकश्यप ने प्रह्लाद को होलिका की गोद में बिठा कर चिता पर बिठा दिया। जब आग लगाई गई तो परमात्मा ने अपने प्रिय प्रह्लाद को बचा लिया, परंतु होलिका जल गई। होलिका के जल जाने के प्रतीक के रूप में इस दिन आग जलाई जाती है। गुरबाणी में पवित्र शब्द अंकित है :

हरि जुगु जुगु भगत उपाइआ

पैज रखदा आइआ राम राजे ॥

*मुख्य सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर साहिब-१४३००६

हरणाखसु दुसटु हरि मारिआ प्रहलादु तराइआ ॥
 अहंकारीआ निंदका पिठि देइ
 नामदेउ मुखि लाइआ ॥
 जन नानक ऐसा हरि सेविआ
 अति लए छडाइआ ॥ (पन्ना ४५१)

होली के दिन लोग एक-दूसरे पर रंग डाल कर खुशी का इज़हार करते हैं। दुनियावी लोगों ने बसंत ऋतु के चढ़दी कला के भाव को भुला कर रिवायत के अनुसार केवल रंग फेंकने, गंदगी फेंकने को ही होली मनाना समझ लिया। सदियों से गुलामी और गरीबी के कारण भारतीयों की मानसिक हालत बहुत ही पस्त हो चुकी थी, जिसको नए व ईश्वरीय रंग में रंगने के लिए सिक्ख गुरु साहिबान ने नई बहार के इस दिन को 'स्वागतम' कहने के लिए प्रभु-भक्तों की संगत में मिल कर होली मनाने की ताकीद की, जिससे हम सब दुनियावी रंगों की जगह रूहानी रंगों में रंग जाएं :

आजु हमारै बने फाग ॥

प्रभ संगी मिलि खेलन लाग ॥

होली कीनी संत सेव ॥

रंगु लाग़ा अति लाल देव ॥ (पन्ना ११८०)

'होला' शब्द 'होली' का धड़ल्लेदार परिवर्तित रूप है, जो दबे-कुचले लोगों के हृदय में उत्साह और प्रसन्नता पैदा करता है। सिक्खों ने उस समय के लोगों के मन में चढ़दी कला और शूरवीरता का जज़्बा भरने के लिए अनेक ऐसे 'बोले' प्रचलित किए हैं, जिनको 'खालसाई बोले' कहा जाता है, जिस तरह 'एक' को 'सवा लाख' कहना, 'मौत' को 'चढ़ाई करना', 'तेग' को 'तेगा', 'देग' को 'देगा', 'दसतार' को 'दसतारा', 'मूछों' को 'मुछहिरा', 'दाढ़ी' को 'दाढ़ा' आदि। इसी तरह 'होली' को 'होला' कहना सिक्खों की विलक्षणता और चढ़दी कला की भावना को प्रकट करता

है। कवि निहाल सिंह के शब्दों में :

बरछा ढाल कटारा तेगा, कड़छा देगा गोला है।
 छका प्रसाद सजा दसतारा अरु करदौना टोला है।
 सुभट सुचाला और लख बाहा, कलगा सिंह
 सुचोला है।

अपर मुछहिरा दाढ़ा जैसे, तैसे बोला 'होला' है।

'होली' से 'होला महल्ला' केवल शब्द-जोड़ की तबदीली नहीं, यह तो गुलाम मानसिकता से आज़ाद सोच-विचार और व्यवहार की तबदीली का प्रकटावा है।

भारत सदियों तक विदेशी हमलावरों का गुलाम रहा। यही कारण है कि भारतीयों के शौक, मौज-मेले और त्योहार भी गुलामी वाली मानसिकता को रूपमान करते हैं। भारतीय लोग तन, मन, धर्म, समाज एवं राजनीतिक सोच के कारण गुलाम थे। गुलामी की दलदल में से आज़ाद सोच, स्वतंत्र अस्तित्व-शक्ति और विलक्षणता को प्रकट करना सचमुच अद्भुत करामात थी। यह चिड़ियों से बाज तुड़वाने, एक को सवा लाख के साथ लड़ाने और असंभव को संभव करने के तुल्य था। ऊंच-नीच, भ्रम-भेस, जात-पात, कर्म-कांड, रंग-नसल के हर तरह के भेदभावों, भिन्नताओं को दूर कर साहिब-ए-कमाल श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने प्रभु-सत्ता-संपन्न, स्वतंत्र सोच-विचार-व्यवहार के लिए खालसा फौज की स्थापना की। गुरुदेव पिता ने भारतीयों को खून की होली, आज़ादी, स्वाभिमान, सह-अस्तित्व के प्रकटीकरण के लिए खालसाई खेल खेलने के लिए मैदान तैयार करके दिया।

भारतीय लोग उस समय घर-परिवार में ही रंग, गंदगी अपनों पर फेंक कर मन प्रसन्न किया करते थे। रिवायती होली और लट्टमार होली से भारतीय स्त्रियों की इज्जत गज़नी के बाज़ारों में नीलाम होने से बच न सकी।

'पंजाबी लोकधारा विश्वकोश' के अनुसार 'महल्ला' अरबी के शब्द 'महल्लहो' का तद्भव है, जिसका तात्पर्य उस स्थान से है, जहां फतह प्राप्त करने के बाद ठिकाना किया जाए। होला महल्ला वाले दिन खालसा को दो दिलों में बांट कर दसम् पातशाह कृत्रिम युद्ध करवाया करते थे। एक दल निश्चित स्थान पर काबिज हो जाता, दूसरा उस पर हमला करके वह स्थान छीनने का यत्न करता। इस तरह कृत्रिम युद्ध के द्वारा युद्ध-युक्ति और पैतरेबाजी का अभ्यास होता। युद्ध के नगाड़े बजते, हथियारों का टकराव होता, जयकारे गूंजते और फतह की खुशियां मनाई जातीं। जो दल जीत प्राप्त करता उसे गुरुदेव पिता गुरु-दरबार की तरफ से सिरोपाउ की बख्शिष करते। फिर वहीं दरबार सजता और शस्त्रधारी सिंघ अपने-अपने कारनामे दिखाते। पहले महल्ला शब्द इसी भाव में इस्तेमाल किया जाता रहा, परंतु धीरे-धीरे यह शब्द उस जुलूस के लिए प्रचलित हो गया जो फतह के बाद फौजी सज-धज और नगाड़ों पर चोट के साथ निकलता। होला महल्ला के जुलूस की प्रथा अब तक जारी है। इस तरह पता चलता है कि श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने गुलामी और हकूमती जब्र के विरुद्ध लोक-मनों के अंदर नया उत्साह और कुर्बानी का जज्बा भरने के लिए 'होली' को 'होला' का रूप दिया।

यहां यह बात वर्णनयोग्य है कि उस समय बादशाह औरंगजेब की तरफ से १६८७ ई में जारी किए फरमान के अनुसार हिंदोस्तानी लोगों को घंटा खड़काने, शस्त्र धारण करने, घुड़-सवारी करने और दसतार सजाने की सख्त मनाही थी। पगड़ी केवल वही सजा सकता था, जिसको बादशाह की तरफ से दरबारी प्रदान की जाए। घोड़े की सवारी करना, निशान, नगाड़ा

और फौज रखना हकूमत के विरुद्ध बगावत के तुल्य था, जिसकी सज़ा मौत और घर-घाट के उजाड़े को न्यौता देने के समान थी। आम लोग हकूमती जब्र के विरुद्ध मुंह नहीं खोलते थे। गुरु जी ने लोगों को मानसिक रूप से बलवान बनाने के लिए हर संभव यत्न किया। प्रचलित त्योहारों को नये तरीके से मनाना इसी श्रृंखला की कड़ी है, जिनको आम लोग घटिया और पिछड़ेपन तरीके से मनाते चले आ रहे थे। अब तेंगें, निशान, नगाड़े और घोड़ों के नज़ारे खालसा के त्यौहार बन गए। हकूमत की नज़रों में संगीन जुर्म समझा जाता सैनिक-अभ्यास खालसा का रिवायती खेल बन गया। गुलामी की बदबू जिन लोगों का दम घोट रही थी वे जब्र-जुल्म के खिलाफ जूझने के लिए मैदान-ए-जंग में आने लगे। सैनिक-अभ्यास और सिक्खों की चढ़दी कला का सदका ही पंजाब की धरती पर विदेशी हमलावरों की तरफ से होने वाले नित्य के हमले सदा के लिए बंद हो गए।

उपरोक्त सारी विचार-चर्चा का मकसद केवल यह दिखाना है कि सतिगुरु ने किस तरह लोगों की मानसिकता में चढ़दी कला का एहसास जगा कर उनको जब्र-जुल्म और अन्याय के खिलाफ जूझने के योग्य बनाया, दबे-कुचले और निर्बल लोगों में नई रूह फूंक कर उनको आत्म-सम्मान के साथ जीना सिखाया। यह सब गुरु जी के सभ्य और सौहार्दपूर्ण नेतृत्व का सदका ही संभव हुआ। होला महल्ला अब भी सिक्ख-शक्ति के प्रदर्शन के रूप में श्री अनंदपुर साहिब में खालसाई हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। शायद यह पंजाब का सबसे बड़ा लोक-जलसा है। इस समय विशेष दीवान सजते हैं और खालसाई शान प्रकट करता महल्ला चढ़ता है, जो किला (शेष पृष्ठ १८ पर)

आजु हमारै बने फाग

-डॉ सत्येंद्र पाल सिंघ*

संसार में आरंभ से ही धर्म और परमात्मा की चर्चा होती रही है, किंतु खंडों में। इसके परिणामस्वरूप इतने अधिक विचार व अवधारणायें स्थापित हो गईं कि धर्म का मौलिक आधार ही दृष्टि से ओझल होता चला गया। जीवन में धर्म का स्थान समझने के स्थान पर इसके लाभ खोजने की प्रवृत्ति बढ़ती गई। मनुष्य को जीवन में सुख और आनंद चाहिए। इसके लिए वह हर उपाय करने को तैयार रहता है। उसे लगा कि कोई आलौकिक शक्ति इसमें सहायक हो सकती है तो धर्म की शरण लेने में भी कोई संकोच नहीं किया। गुरु साहिबान ने भी सुख और आनंद को अपने चिंतन के केंद्र में रखा, किंतु उन्होंने आनंद को धर्म से सृजित होते हुए देखा। उन्होंने धर्म को माध्यम अथवा सहायक के रूप में नहीं जीवन के लक्ष्य के रूप में स्थापित किया। मन को सुख और आनंद परमात्मा की शरण में स्वयं को अर्पित कर देने से उसकी कृपा से मिलता है :

मेरे प्रीतम प्रान अघार मन ॥

जीउ प्रान सभु तेरो धन ॥ (पन्ना ११८१)

मनुष्य को तन और उसके अंदर जीवात्मा परमात्मा की ही दी हुई है। परमात्मा ही उसका पालन-पोषण कर रहा है। मनुष्य का अस्तित्व परमात्मा के कारण है। जब मनुष्य इस विचार को अंगीकार कर लेता है तो उसकी सोच में बस परमात्मा ही रह जाता है। किसी भी सांसारिक पदार्थ की कामना के लिए कोई स्थान नहीं

बचता :

तुझ बिनु दूजा कोइ नाहि ॥

सभु तेरो खेलु तुझ माहि समाहि ॥ (पन्ना ११८१)

गुरुबाणी ने परमात्मा को देखने और समझने की नवीन दृष्टि दी। परमात्मा ऐसी परम शक्ति है जिसकी कोई तुलना नहीं हो सकती। उसके जैसा न कोई था, न कोई है और न कोई हो सकता है। उसने सारी सृष्टि रची है और उसे अपनी इच्छा से चला रहा है। इससे कोई भी असहमत नहीं हो सकता। विचारों की भिन्नता परमात्मा को पाने के यत्नों और उद्देश्य पर थी। गुरु साहिबान उन विचारों से सहमत नहीं थे जो सदियों से मानव समाज ने धारण किए हुए थे। उन्होंने कहा कि परमात्मा की शरण लेने का उद्देश्य आनंद की प्राप्ति कदापि नहीं हो सकता। आनंद तो परमात्मा की भक्ति में ही है। जब मनुष्य परमात्मा से मन को जोड़ता है उसकी आनंद की अवस्था बनने लगती है :

जा के भगत आनंद मै ॥

जा के भगत कउ नाही खै ॥ (पन्ना ११८१)

परमात्मा की भक्ति ही आनंद का स्रोत है। जब मन परमात्मा में रमने लगता है, सारे दुख, क्लेश, संताप उससे दूर होने लगते हैं। यह आनंद और सुख उससे अधिक श्रेष्ठ और गहरा होता है जिसकी कल्पना वह सांसारिक पदार्थों और कामनाओं में करता आया है। जीवन में असाधारण बदलाव आते हैं और

*ई-१७१६, राजाजी पुरम, लखनऊ-२२६०१७, फोन : ९४१५९-६०५३३

इंद्रियों की भटकन थम जाती है। वास्तव में धर्म का यही उद्देश्य है। श्री गुरु अरजन साहिब ने इसे बड़ी ही सुंदरता से अपनी बाणी में अभिव्यक्ति दी है :

नेत्र संतोखे दरसु पेखि ॥

रसना गाए गुण अनेक ॥

त्रिसना बूझी गुरु प्रसादि ॥

मनु आघाना हरि रसहि सुआदि ॥ (पन्ना ११८१)

परमात्मा की भक्ति, उसके प्रेम का रस इतना आनंद देने वाला है कि मन पूर्ण संतुष्ट हो जाता है। मनुष्य की आंखें, जो संसार के तमाशों को देख कर सदा लोभ करती हैं, बेचैन रहती हैं, परमात्मा के दर्शन से अपूर्व संतोष प्राप्त करती हैं। जिह्वा अब तक स्वाद के लिए अनेक रसों के पीछे भाग रही थी, परमात्मा के गुणों का गायन करते हुए सच्चे रस से भरपूर हो उठती है। उसे किसी अन्य स्वाद की कामना ही नहीं रहती। मनुष्य ने मन में धन, दौलत, शक्ति, पद, प्रशंसा, लोक-प्रतिष्ठा आदि अनेक कामनायें पाली होती हैं। कामनाओं के कारण ही मनुष्य दिन-रात व्यथित और चिंतित रहता है। वाहिगुरु की शरण में आते ही सारी कामनायें शांत हो जाती हैं और मन के उद्वेग लुप्त हो जाते हैं। परमात्मा के सिमरन से सारे पाप, दुख, अवगुण मिट जाते हैं :

राम रंगि सभ गए पाप ॥

राम जपत कछु नाहि संताप ॥

गोबिंद जपत सभि मिटे अंधेर ॥

हरि सिमरत कछु नाहि फेर ॥ (पन्ना ११८३)

परमात्मा का सिमरन अज्ञानता दूर कर देता है और सारे भ्रमों से उबार लेता है। संसार के माया-जाल का सच दिखने लगता है। इससे जीवन-मरण, मान-अपमान, ऊंच-नीच, धनी-निर्धन का कोई दुख, संदेह नहीं रहता।

मन जैसे-जैसे परमात्मा के रंग में डूबता जाता है, परमात्मा के प्रति समर्पण दृढ़ होता जाता है; जीवन में आनंद बढ़ता जाता है :

गुरु सेवउ करि नमसकार ॥

आजु हमारै मंगलचार ॥

आजु हमारै महा अनंद ॥

चित लथी भेटे गोबिंद ॥ (पन्ना ११८०)

यह आत्मिक आनंद मनुष्य का वैयक्तिक अनुभव है। इसे परमात्मा में रमा हुआ गुरसिक्ख ही जान सकता है। गुरु साहिबान ने इसे व्यापक सामाजिक पटल पर भी उतारा ताकि परमात्मा की सर्वव्यापकता प्रकट हो सके; समूची मानवता का कल्याण हो सके। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने सामाजिक स्तर पर इसके अत्यंत प्रभावशाली और युगांतरकारी प्रयोग किए ताकि समाज के सामने प्रेरक आदर्श रखे जा सकें। यह तो सभी स्वीकार करते आये हैं कि सुख और आनंद जीवन का अभिन्न अंग हैं। इसके लिए भिन्न-भिन्न मार्ग अपनाये गए। आश्चर्यजनक बात यह रही कि धर्म और अध्यात्म को गंभीर और नीरस विषय बना दिया गया। आम मनुष्य ने इसके चलते दोहरी सोच अपना ली। वह लाभ के लिए धर्म की ओर आकर्षित होता और आनंद के लिए सांसारिक पदार्थ एवं संबंधों को चुनता। उसके मस्तिष्क में धर्म और मन में माया बसी हुई थी। इसका अंतिम निष्कर्ष शून्य निकलता था। गुरु साहिबान ने मन और मस्तिष्क दोनों को एक कर धर्म से जोड़ने की राह खोली थी। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने सुख और आनंद के सामाजिक प्रतीकों को अध्यात्म की दृष्टि प्रदान कर उनका रूप ही बदल दिया। गुरु साहिब ने शाही अंदाज में दरबार लगाए, किंतु उन दरबारों में राज-सिंहासन हड़पने के षड़यंत्र नहीं रचे जाते थे, दुश्मनों के दमन की साजिशें नहीं होती थीं, झूठे दंभ का प्रदर्शन नहीं होता था।

उनके दरबार में सत्-साहित्य रचा और पढ़ा जाता, धर्म-चर्चा होती और सच्चा जीवन जीने के पाठ पढ़ाये जाते। उनके दरबार में सिंहासन पर विराजमान व्यक्ति की इच्छा नहीं पांच प्यारों के आदेश चलते थे। उसी दरबार ने प्रेम से परमात्मा को पाने के लिए आनंद को जीवन की शैली बना दिया। सिक्खों के संसार का नाम ही श्री अनंदपुर साहिब हो गया। त्यौहार और मेले सामाजिक आनंद का मुख्य स्रोत थे। श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने इन्हें नूतन दृष्टि प्रदान कर इनके अर्थ ही बदल दिए। वैसाखी को जहां उन्होंने खालसा की साजना के लिए चुना वहीं होली को मानवीय गौरव व अस्मिता दृढ़ करने का अवसर बना दिया :

आजु हमारै बने फाग ॥

प्रभ संगी मिलि खेलन लाग ॥

होली कीनी संत सेव ॥

रंगु लाग़ा अति लाल देव ॥ (पन्ना ११८०)

उपरोक्त वचन श्री गुरु अरजन साहिब के हैं। श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने ठीक इन्हीं वचनों के अनुरूप होली को महज आनंद के स्थान पर प्रभु-आनंद का पर्व बना दिया। श्री अनंदपुर साहिब में यह त्यौहार बड़े ही धूमधाम से मनाया जाता। श्री गुरु गोबिंद सिंह जी स्वयं सारे आयोजनों में शामिल होते। बड़ी संख्या में सिक्ख श्री अनंदपुर साहिब में जुटते थे। इस परम आनंद का अवसर बना देने के लिए ही इसका नाम 'होला महल्ला' रख दिया गया। होला का अर्थ होता है- आक्रमण कर देना। 'होला महल्ला' से भाव था कि इस पर्व का लाभ उठाने में कोई कसर बाकी न रह जाये। इसे पूरे मनोयोग से मनाया जाए। इस त्यौहार को मनाते हुए मन परमात्मा की प्रीति में गहराई तक डूब जाए। इस गहरी प्रभु-प्रीति में ऐसे गुण निखर कर सामने आयें जो धर्म की स्थापना में सहायक हों। इस त्यौहार को मनाते हुए

मन निरंतर परमात्मा की प्रतीति करता रहे, उसकी सर्वव्यापकता और दयालुता को अनुभव करता रहे। इस तरह होली जैसे सामाजिक त्यौहार भी गुरसिक्ख की परमात्मा-भक्ति का अंग बन गए। यह अति महत्त्वपूर्ण बदलाव था। कीचड़ और रंगों के स्थान पर होला महल्ला का आरंभ गुरबाणी नित्त नेम से होता। कवि, ढाडी और रागी सिंघ गुरबाणी-गायन और अपनी रचनाओं से सिक्खों में परमात्मा के प्रति समर्पण एवं प्रेम की भावना को दृढ़ करते तथा आत्मिक अवस्था में रंग भरते। इसके बाद शक्ति और वीरता का प्रदर्शन करने वाले खेल व अभ्यास होते। गुलाब जल और गुलाब से बने रंगों की वर्षा की जाती, जिसमें सभी प्रेमपूर्वक सराबोर होते। दूसरे दिन सिक्खों के दो गुट बना कर उनके मध्य छदम युद्ध कराया जाता। यह युद्ध बिना किसी को शारीरिक हानि पहुंचाये लड़े जाते। इसका उद्देश्य था युद्ध के नए-नए ढंग सीखना और तन-मन को स्वस्थ बनाये रखना। जीतने वालों को कड़ाह प्रसाद मिलता। यह स्पष्ट संदेश था कि गुरसिक्ख के लिए शारीरिक बल का अर्थ धर्म की मर्यादा बनाये रखने की सक्षमता तक सीमित है। इसके अतिरिक्त शारीरिक बल और बहादुरी का कोई प्रयोजन नहीं है। गुरसिक्ख के जीवन का एकमात्र और परम उद्देश्य परमात्मा के साथ जुड़ना है :

हटवाणी धन माल हाटु कीतु ॥

जूआरी जूऐ माहि चीतु ॥

अमली जीवै अमलु खाइ ॥

तिउ हरि जनु जीवै हरि धिआइ ॥ (पन्ना ११८०)

दुकानदार इसलिए दुकान खोलता है कि वह मुनाफा कमा सके। जुआरी का ध्यान सदा जुए में ही लगा रहता है कि वह कब और कैसे दांव लगाकर जीत सके। नशा करने वाला दिन-रात नशे की फिक्र में रहता है।

उसे कोई और बात नहीं सूझती। दुकानदार मुनाफा कमा रहा है तो उसे लगता है कि उसका जीवन सफल है। जुआरी को जुआ खेलने को मिल रहा है तो यही उसकी सबसे बड़ी उपलब्धि है। नशा करने वाले को नशा मिल जाए तो वह पूर्ण तृप्त हो जाता है। गुरसिक्ख के जीवन की सबसे बड़ी कामना परमात्मा का स्मरण करना और उसे जीवन में धारण करना है। परमात्मा से जुड़ कर उसे लगता है कि उसने सब कुछ पा लिया है। अन्य लोग होली के एक-दो रंगों में भीग जाने पर ही आनंदित हो उठते हैं, किंतु परमात्मा से जुड़े मन को लगता है कि वह संसार के सारे रंगों में रंग गया है। उसे बाहरी रंगों की आवश्यकता ही नहीं रहती :

सरब रंग इक रंग माहि ॥

सरब सुखा सुख हरि कै नाइ ॥ (पन्ना ११८०)

परमात्मा के प्रेम का रंग ऐसा अद्भुत है कि मन को सारी खुशियां उसमें प्राप्त होने लगती हैं। परमात्मा से मन जोड़ने के बाद मिलने वाला सुख संसार के सारे सुखों से श्रेष्ठ है। उस सुख का कोई मोल ही नहीं है। श्री गुरु अरजन साहिब ने कहा कि मन परमात्मा से जुड़ा हो तो सदैव ही सुख और आनंद बना रहता है :

तिसु सद बसंतु तिसु रिदै नामु ॥ (पन्ना ११८०)

जो आनंद और उत्साह श्री अनंदपुर साहिब में होला महल्ला मनाते हुए सिक्खों के मन में प्रकट होता था वह होला महल्ला बीत जाने के बाद भी वैसे ही बना रहता था। जिस रंग में सिक्ख श्री अनंदपुर साहिब में होला महल्ला मनाते नज़र आये वही रंग उनमें उस समय भी दिखाई दिया जब वे मुगल फौज और पहाड़ी राजाओं की सेनाओं से लड़ रहे थे। श्री

अनंदपुर साहिब छूट गया, श्री गुरु गोबिंद सिंह जी के साथ मात्र चालीस सिक्ख चमकौर की कच्ची गढ़ी में बीस लाख की दुश्मन फौज से आमने-सामने थे, फिर भी वह रंग उसी शान से चमकता कायम रहा। यह जंग भी उसी मनोदशा में लड़ी गई, जैसे श्री अनंदपुर साहिब में होला महल्ला के दिन लड़ी जाती थी। परमात्मा से जुड़े सिक्ख के मन से प्रेम और आनंद की अवस्था कभी टूट ही नहीं सकती। उसकी निडरता, सुख, आत्म-बल और दृढ़ता कभी भंग हो ही नहीं सकती :

से निरभउ जित भउ पइआ ॥

सो सुखीआ तिसु भ्रमु गइआ ॥

सो इकांती तिसु रिदा थाइ ॥

सोई निहचलु साच ठाइ ॥ (पन्ना ११८०)

गुरसिक्ख इसलिए निर्भय है, क्योंकि वह सदा परमात्मा के भय में रहता है। परमात्मा के भय में वह कभी भी असत्य आचरण नहीं करता। इस कारण उसे कभी भी किसी से भयभीत होने की आवश्यकता नहीं पड़ती। सच उसके अंदर अथाह आत्म-बल भर देता है। परमात्मा से जुड़ कर उसके मन के सारे भ्रम दूर हो जाते हैं। उसे संसार का मायाजाल समझ आ जाता है। उसे ज्ञान हो जाता है कि परमात्मा ही सुख का स्रोत है। यह उसकी सदैव बनी रहने वाली सुख की अवस्था का गूढ़ रहस्य है। परमात्मा में उसका विश्वास इतना अटल होता है कि इस विश्वास के साथ वह धर्म और न्याय के मार्ग पर अकेले चलने में भी पूर्ण समर्थ होता है। जीवन की राह में परमात्मा उसका सबसे बड़ा संगी होता है जिसके होते हुए किसी अन्य सहारे की आवश्यकता ही नहीं रह जाती। परमात्मा को सदा सहायी मानते हुए वह धर्म के संकल्प पर दृढ़ता से खड़ा रहता है।

संसार में मानव समाज जितने भी त्यौहार, पर्व मनाता है उनकी कोई न कोई धार्मिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, सामाजिक पृष्ठभूमि है। इनका मन्तव्य एक ही है-- प्रेरणा ग्रहण करना और सुख की व्यापकता का निर्माण करना। सर्वत्र सुख होगा तो सभी सुखी होंगे। गुरमति की पावन दृष्टि सर्वमंगल की है। यह परमात्मा से प्रीति के मार्ग पर चल कर ही संभव है। इससे जीवन का ढंग बदलता है और मनुष्य का वैयक्तिक व सामाजिक व्यवहार भी बदल जाता है। सभी के लिए उन्नति और समृद्धि के अवसर खुलते हैं। यह अवसर गुरु साहिबान ने खोले। सभी वर्ण, वर्ग एक होकर सुख और आनंद की

अवस्था पाने योग्य बन गए :

होइ इकत्र मिलहु मेरे भाई दुबिधा दूरि करहु
लिव लाइ ॥ (पन्ना ११८५)

गुरु साहिबान ने सर्वमंगल के लिए ही साधसंगत की अवधारणा को सामने रखा और वंड (बांटकर) छको का सिद्धांत स्थापित किया था। सेवा और लंगर जैसी संस्थाएँ इसी सिद्धांत से निकलीं और सिक्ख धर्म की पहचान बन गई। सर्वमंगल परमात्मा से जुड़ने में ही है। गुरसिक्ख के किसी भी आचार-व्यवहार के मूल में जब यह उद्देश्य प्रमुख होता है तभी वह गुरमति के अनुरूप श्रेणीबद्ध किया जा सकता है। ☀

सिक्ख चढ़दी कला का प्रतीक : होला महल्ला

(पृष्ठ १३ का शेष)

श्री अनंदगढ़ साहिब से आरंभ होकर किला श्री होलगढ़ साहिब के स्थान से होता हुआ तख्त श्री केसगढ़ साहिब में संपूर्ण होता है। निहंग सिंघ रिवायती खालसाई पहरावे में खालसाई खेलों के द्वारा अपने गुरु-प्रदत्त विलक्षण अस्तित्व का खूबसूरत प्रदर्शन चरण गंगा स्टेडियम में करते हैं। होला महल्ला के दीवान साधारणतया गांवों में सजते हैं, जिनमें उच्च कोटि के ढाडी और कवीशर सिक्ख इतिहास की तस्वीर हू-ब-हू प्रकट करते हैं, जिससे नौजवानी अपने अमीर इतिहास और विरासत के साथ जुड़ती है। आज ज़रूरत है कि इस परंपरा को पूर्ण रूप से स्थायी बनाया जाए। मैंने निजी रूप में सिक्ख इतिहास और सिद्धांतों की प्राथमिक जानकारी अपने गांव खानोवाल में प्रसिद्ध ढाडी ज्ञानी सोहन सिंघ सीतल से वहां लगने वाले दीवानों में से ही प्राप्त की।

आज के समय होला महल्ला की मूल

भावना को प्रचारित करने की बहुत ज़रूरत है। समाज में प्रचलित हो चुके अनेक तरह की जैसे-
- बुराईओं और कुरीतियों, नशों, भ्रूण-हत्या, दहेज, वातावरण-प्रदूषण आदि की गुलामी से छुटकारा पाने के लिए लोक-मनों में चेतना पैदा करनी चाहिए। लोगों की भावनाओं को अपने निजी हितों की पूर्ति के लिए इस्तेमाल करने की बजाय उनको हक, सच और इंसाफ की स्थापति के लिए प्रेरित करने की ज़रूरत है, ताकि वर्तमान समय में भी होला महल्ला सिक्खों की चढ़दी कला का नज़ारा पेश कर सके, जिससे प्रेरणा, उत्साह प्राप्त कर, नशों की गुलाम हो रही हमारी नौजवान पीढ़ी को रोका जा सके। मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य ही कौम की चढ़दी कला को प्रकट करता है, जिसकी तरफ हमें विशेष ध्यान देने की ज़रूरत है। ☀

गुरुद्वारा : संकल्प और व्यवहार

-सतविंदर सिंघ फूलपुर*

धर्म-स्थान हमारे मन में ऐसा रूहानी आनंद प्रदान कर देते हैं कि हमारा मन कुछ समय के लिए दुनियावी भटकनों से मुक्त होकर सहज की अवस्था में आ जाता है। हमारी चेतना किसी परम सत्य हस्ती के प्रभाव में आकर दैवी-सादगी में ढल जाती है; हृदय को ठंडक-सी महसूस होती है।

हरेक धर्म का अपना स्थान होता है, जहां से उस धर्म से संबंधित गतिविधियों का आगाज़ किया जाता है। हिंदुओं का धर्म-स्थान मंदिर, मुसलमानों का मस्जिद, ईसाइयों का गिरजा, पारसियों के अग्नि मंदिर, बौद्धी-जैनियों का मठ है। इसी तरह सिक्खों का धर्म-स्थान गुरुद्वारा है।

गुरुद्वारा के कोशगत अर्थ— सतिगुरु का घर; वह स्थान जहां श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश हो, संगत जुड़े, सत्य की विचार और सत्य का विस्तार होता हो। जहां सिक्खी का प्रचार किया जाए और गुरुमति की शिक्षा दी जाए तथा मानव जाति के हकों की रक्षा के लिए यत्न किए जाएं, उस स्थान का नाम गुरुद्वारा है।^१

शुरू में इसका नाम धर्मशाल था।^२ गुरुद्वारा नाम बाद में प्रचलित हुआ। भाई कान्ह सिंघ नाभा के अनुसार, "श्री गुरु नानक देव जी से लेकर श्री गुरु अरजन देव जी तक सिक्खों के धर्म-मंदिर का नाम 'धर्मशाला' रहा है। श्री गुरु अरजन देव जी ने सबसे पहले अमृतसर सरोवर के धर्म-मंदिर की 'हरिमंदर' संज्ञा दी और श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के समय धरमसाल की गुरुद्वारा संज्ञा हुई।^३

साधारण रूप से गुरुद्वारे का नाम लेते ही हमारे मन में एक खास प्रकार का बिंब बनता है, जिसमें कोई गुंबदनुमा इमारत, उसमें श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश, गुरुबाणी कीर्तन का चलता प्रवाह, झूलता खालसाई निशान साहिब, सरोवर, संगत-पंगत आदि शामिल होती है। ये सब गुरुद्वारा के ढांचागत स्वरूप का अहम अंग हैं।

संकल्प रूप में गुरुद्वारा का अर्थ गुरु की शरण, गुरु का आसरा करने ज्यादा उचित है, जिसकी विचार हम आगे जाकर करेंगे।

व्यवहारिक रूप से गुरुद्वारे के कार्य-क्षेत्र के बारे में भाई कान्ह सिंघ नाभा के विचार विशेष रूप से विचारने योग्य हैं— "सिक्खों का गुरुद्वारा विद्यार्थियों के लिए स्कूल, आत्म-जिज्ञासा वालों के लिए ज्ञान-उपदेशक आचार्य, रोगियों के लिए शफाखाना, भूखों के लिए अन्नपूर्णा, स्त्री जाति की लाज रखने के लिए लोहमयी दुर्गा और मुसाफिरों के लिए विश्राम का स्थान है।"^४

व्यवहारिक रूप से गुरुद्वारा की उक्त परिभाषा आदर्श समाज का केंद्रीय बिंदु है। यह बेगमपुरा के संकल्प का व्यवहारिक रूप है, बशर्ते कि उक्त सभी बातें न्यायसंगत ढंग के साथ व्यवहारिक रूप में घटित होती हों। इस तरह सिक्ख धर्म का गुरुद्वारा मानवीय जीवन के धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षणिक आदि अलग-अलग पक्ष से भी नेतृत्व करता है। व्यवहारिक रूप से गुरुद्वारे की बाकी धर्म-स्थानों से विलक्षणता और विशेष महत्ता इस बात से है कि यहां हर मनुष्य बिना जात-पात, ऊंच-नीच, छूत-छात, लिंग-भेद के आकर परमात्मा

*संपादक। फोन : ९९१४४-१९४८४

की इबादत में शामिल हो सकता है। यहां किसी के साथ भेदभाव नहीं किया जाता। यहां से "एकु पिता एकस के हम बारिक" और "सभे साझीवाल सदाइनि" का उपदेश दिया जाता है। इस तरह धर्मों के इतिहास में Devision को तोड़ कर Unity Create करने का काम पहली बार गुरुद्वारे ने किया।

श्री गुरु नानक देव जी ने 'जपु' बाणी में सारी धरती को ही धरमसाल अर्थात् धर्म कमाने की जगह कहा है :

राती रुती थिती वार ॥

पवण पाणी अगनी पाताल ॥

तिसु विचि धरती थापि रखी धरम साल ॥

(पन्ना ७)

इस धरती-धरमसाल का ज्ञान उन गुरुमुखों को होता है, जिन्होंने गुरुद्वारे (धरमसाल) के द्वारा धर्म कमा कर जीवन के परम लक्ष्य के लिए उच्चतम आध्यात्मिक अवस्था प्राप्त कर ली है। इस धरती-धरमसाल का ज्ञान करवाने के लिए श्री गुरु नानक देव जी ने "घरि घरि अंदर धरमसाल" का संकल्प कायम किया। जिज्ञासु पहले नाम की कमाई करने के लिए धरमसाल (गुरुद्वारे) जाता है। वहां जाकर जब उसे "जेता कीता तेता नाउ ॥" और "नाम के धारे सगले जंत ॥ नामि के धारे खंड ब्रहमंड ॥" का ज्ञान होता है, तो उसे सारी धरती धरमसाल नज़र आने लगती है। धरती-धरमसाल का ज्ञान करवाने के लिए गुरुद्वारा (धरमसाल) पहला पड़ाव है। श्री गुरु नानक देव जी द्वारा स्थापित की इस धरमसाल ने लोगों में समूह-भाव पैदा किया और इकट्ठे बैठने की युक्ति सिखाई। इसी एकता ने भारत को सदियों की गुलामी की जंजीरों से मुक्त करवाया।

गुरुद्वारे जाना और गुरुद्वारा (गुरु का दर) प्राप्त करना दो अलग-अलग बातें हैं। गुरुद्वारे जाना गुरुद्वारे का व्यवहारिक सरोकार है, जबकि

गुरुद्वारा प्राप्त करना गुरुद्वारे का संकल्प है। गुरु का दर कैसे प्राप्त होता है? इसके बारे में 'सिध गोसटि' बाणी में चरपट योगी का श्री गुरु नानक देव जी के साथ संवाद देखने योग्य है। चरपट योगी श्री गुरु नानक देव जी से सवाल करता है कि हे स्वामी, मेरी विनती सुनो! मैं सही विचार पूछता हूँ! गुस्सा न करना! उत्तर दो कि गुरु का दर कैसे प्राप्त होता है?

सुणि सुआमी अरदासि हमारी

पूछउ साचु बीचारो ॥

रोसु न कीजै उतर दीजै

किउ पाईए गुर दुआरो ॥

(पन्ना ९३८)

श्री गुरु नानक देव जी उत्तर देते हैं कि जब सचमुच गुरु का दर प्राप्त हो जाता है तो चंचल मन प्रभु की याद में जुड़ा रहता है। प्रभु का नाम ज़िंदगी का आसरा हो जाता है। ऐसा प्यार प्रभु के प्रति तब जगता है जब परमात्मा खुद जीव को अपनी याद में जोड़ लेता है : इहु मनु चलतउ सच घरि बैसै

नानक नामु अधारो ॥

आपे मेलि मिलाए करता लागै साचि पिआरो ॥

(पन्ना ९३८)

गुरुद्वारे जाना तो ही अच्छा लगता है यदि मन गुरु के शब्द में भीग जाए। जब तक उसका मन शब्द में भिदा न जाए, तब तक प्रभु के दरबार में शोभा नहीं पा सकता :

सभि रस भोगण बादि हहि सभि सीगार विकार ॥

जब लगु सबदि ना भेदीए किउ सोहै गुरदुआरि ॥

(पन्ना १९)

गुरमति में परम आनंद की अवस्था शब्द-चेतना के सुमेल द्वारा संभव बतायी गई है। इस अवस्था को चौथा पद, तुरीया अवस्था, पांचवां खंड या परम पद की अवस्था भी कहा गया है।

जो गुरसिक्ख (अभ्यासी) गुरुद्वारे के साथ सुरति जोड़ कर गुरु की शरण के द्वारा धरम-खंड का यात्री बन शब्द की कमाई करता है,

गुरु की कृपा से उसका दसवां द्वार, जो पहले गुप्त था, प्रकट हो जाता है अर्थात् उसकी चेतना जाग जाती है :

गुरुदुआरै लाइ भावनी इकना दसवा दुआर
दिखाइआ ॥ (पन्ना १२२)

इस अवस्था में मानवीय चेतना मनोवैज्ञानिक बारीकियों, सुहज सूक्ष्मतायों, ध्यानी महीनतायों और सामाजिक चेतनायों के सारे फैलाव को ज़ब्त में लाकर अपने असली घर शब्द में समा जाती है। इस हालत में मानवीय जिज्ञासा के सारे फैलाव जाग कर शब्द की अनुभूति में शामिल होकर आखिरी संतुलन में आ जाते हैं।^{१५} इस तरह "तह अनेक रूप नाउ नव निधि तिस दा अंत न जाई पाइआ ॥" वाली अवस्था बन जाती है।

गुरुद्वारे के साथ लगाव रखने वालों की सुरति, मति, मन, बुद्धि नए सिरे से घड़ी जाती है। इस तरह इसे सरम खंड (Realm of Conversion) का प्रवेश द्वार कहा जा सकता है।

यहां आकर मानवीय मन में स्वाभाविक ही परिवर्तन आ जाता है; कठोर मन में नम्रता आ जाती है। यहां दुनियावी शब्दावली की जगह अलग पवित्र शब्दावली का प्रयोग होने लग जाता है। ऐसा बरताव निश्चय ही मानवीय हृदय को पवित्र करने के योग्य होता है। श्री गुरु नानक पातशाह विषय-विकारों के साथ ज्ञान की समझ पाने का उपदेश करते हैं :

भांडा हछा सोइ जो तिसु भावसी ॥

भांडा अति मलीणु धोता हछा न होइसी ॥

गुरु दुआरै होइ सोझी पाइसी ॥

एतु दुआरै धोइ हछा होइसी ॥ (पन्ना ७३०)

गुरमति अनुसार इस जगत में अकाल पुरख सबका पति परमेश्वर है और सब जीव उसकी स्त्रियां हैं, इसलिए हर गुरुसिक्ख का विवाह गुरुद्वारे के माध्यम से प्रभु-पति के साथ होना है। फरमान है :

गुरु दुआरै हमरा वीआहु जि होआ जां सहु
मिलिआ तां जानिआ ॥ (पन्ना ३५१)

गुरुद्वारे (गुरु की शरण में जाकर) जब जीव-स्त्री को पता चलता है कि मेरा सहु (पति) तो सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, सबसे ऊंचा गुणी निधान है। इसके संग जुड़ कर, इसकी कृपा से मैं भी सत्, संतोष, दया, धर्म आदि सद्गुण धारण कर लूंगी तो फिर ऐसी सुहागिनों को किसी और की चाह नहीं रहती :

जिन्हा नाउ सुहागणी तिन्हा झाक न होर ॥

(पन्ना १३८४)

इस तरह गुरुद्वारे के माध्यम से प्रभु-प्रियतम के साथ ब्याही जाने के बाद उनकी शमशान, मशान, कब्र और तथाकथित साधुओं के डेरों आदि स्थानों पर जाने की चाह खत्म हो जाती है। उनकी गुरुद्वारे और प्रभु-प्रियतम में दृढ़ भावना पैदा हो जाती है। सतिसंगत रूपी सुहागिनें गुरुद्वारे में मिल-बैठ कर अपने प्रभु-परमेश्वर के गुणों के गीत गाती हैं।

भाई गुरदास जी लिखते हैं कि जैसे हंसों का झुंड मानसरोवर पर बैठा है और अमूल्य मोती खा-खाकर प्रसन्न होता है, वैसे सज्जन, मित्र रसोई में मिल-बैठ कर कई तरह के भोजन आदि रस खाते हैं; जैसे वृक्ष की छाया में अनेक पक्षी मिल बैठते हैं और मीठे फल खाकर मीठे वचनों द्वारा सुहाते हैं, इसी तरह सतिगुरु के आज्ञाकारी गुरुसिक्ख धरमसाल (गुरुद्वारे, गुरु की शरण) में मिल बैठते हैं और गुरु-ज्ञान (गुरु-शब्द) के नाम अमृत रस को पी-पीकर तृप्त होते हैं :

जैसे तौ मराल माल बैठत है मानसर

मुकता अमोल खाइ खाइ बिगसात हैं।

जैसे तौ सुजन मिलि बैठत हैं पाकसालि

अनिक प्रकार बिंजनादि रस खात हैं ॥

जैसे द्रुम छाया मिलि बैठत अनेक पंछी

खाइ फल मधुर बचन कै सुहात हैं।

तैसे गुर सिख मिलि बैठत धरमसाल
सहज सबद रस अंगित अघात हैं ॥

(कबित्त सवैये)

गुरुबाणी में बार-बार जिस विवेक-बुद्धि की याचना की गई है, वह गुरु के दर से प्राप्त होती है :

पिआरे इन बिधि मिलणु न जाई मै कीए करम
अनेका ॥

हारि परिओ सुआमी कै दुआरै दीजै बुधि बिबेका ॥
(पन्ना ६४१)

गुरु के दर से विवेक-बुद्धि हासिल कर चुका व्यक्ति सीमातीत और निष्काम होता है। ऐसे सत् पुरुष की चाल ही निराली होती है। उसने मन, वचन और कर्म के कुंडलों को, इनकी गांठों को सतसंगत में ढीले करके खोल लिया होता है और जीवन-शक्ति के स्तंभ को परम आनंद के रूप में अनुभव कर लिया होता है। फिर उसे मंदिर, मस्जिद, पुराण, कुरान में कोई भेद दिखाई नहीं देता। वह अलग-अलग भेसों, कर्म-कांडों की व्यर्थता की बात तो करता है, परंतु इस सब में से मानवता को मनफी नहीं करता। मानस की जाति के परस्पर संबंधों, भाईचारे और एक दूसरे पर प्रेमपूर्ण अधिकार को परमात्मा की तरफ से मानव को दी हुई बख्शिशा मानता है। ज्ञान से भरपूर उसकी विवेक-बुद्धि उसे सूरज, धरती, पवन, पानी, आकाश आदि सब पर सबके बराबर अधिकार समझने की प्रेरणा देती है। दरअसल उसे कहने और कहा बूझने की जाच आ गई होती है। विवेक-बुद्धि व्यक्ति का वह अंतर्गत आधार है जिसके आसरे वह आत्मिक जगत की गहराइयों में गोता मार कर उसमें से शक्ति प्राप्त करके उस शक्ति का सदुपयोग बाहरी जगत के लिए करता है।^६

इस विवेक-बुद्धि द्वारा ही उसे निर्मल कर्म का ज्ञान हो जाता है। सत्, संतोष, दया, धर्म,

धीरज, सेवा, नेकी, परोपकार, ईमानदारी, निडरता, सहनशीलता, क्षमा, नम्रता आदि सद्गुण उसके जीवन का आधार बन जाते हैं।

उक्त विचार-चर्चा से यह स्पष्ट होता है कि गुरुद्वारा जहां गुरु का द्वार है, मानवाधिकारों की रक्षा, बुनियादी ज़रूरतों की प्राप्ति की प्रेरणा का केंद्र, धर्म कमाने की धरमसाल है, वहीं आत्मिक और रूहानी मंडल के जिज्ञासुओं के लिए एक ऐसा कोटगढ़ है, जहां काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार के विषय मानव-मन में प्रवेश नहीं कर पाते और जिज्ञासु की समूची वासनाएं व कामनाएं गुरु को समर्पित होकर प्रार्थनाओं में तबदील हो जाती हैं, जहां "तू तू करता तू हूआ मुझ महि रहा न हूँ" की अवस्था पैदा हो जाती है, जहां रूहानियत का शिखर हो जाता है; जहां तीन भवनों का ज्ञान हो जाता है; दसम द्वार खुलता है और मन शांतचित्त आनंदित हो जाता है। भक्ति और शक्ति से लबरेज होकर मानव सर्वकल्याणकारी हो जाता है। यही गुरुद्वारे की महानता है और यही गुरुद्वारे का मकसद है।

हवाले और टिप्पणियां :-

१. संता सिंघ ततले, गुरुबाणी तत्त सागर, जिल्द तीसरी, पृष्ठ १३५

२. पुरातन जन्म साखी में गुरु नानक पातशाह द्वारा पहली धर्मशाल तुलंबा में स्थापित करने के प्रमाण मिलते हैं।

३. भाई कान्ह सिंघ नाभा, महान कोश, पृष्ठ ४१६

४. वही, पृष्ठ ४१६-१७

५. प्रो. जगदीश सिंघ मुकेरियां, हस्तलिखित लेख : गुरुबाणी विआखिआ दी सहिज प्रणाली

६. डॉ. जोध सिंघ, धर्म अध्ययन : अकादमिक परिपेख, पृष्ठ ६



शहीद भाई सुबेग सिंघ-भाई शाहबाज़ सिंघ

-स. बलविंदर सिंघ जौड़ासिंघा*

बाबा बंदा सिंघ बहादुर की शहादत के बाद मुगल हकूमत की तरफ से सिक्खों पर और भी सख्ती शुरू हो गई। इसको इतिहास में सिक्खों पर घोर अत्याचारों का दौर कहा जाता है। घोर अत्याचारों का यह सिलसिला पंजाब में मिसलों के ताकतवर होने तक चलता है और महाराजा रणजीत सिंघ के राज्य काल के समय कम हुआ। सिक्ख इतिहास के लिए जहां यह काला दौर था, वहीं सिक्खों के सुनहरी इतिहास का गवाह भी है। समकालीन मुगल हाकिमों द्वारा सिक्खों को जो कष्ट-यातनाएं दी गईं वह सिक्ख अरदास का भाग बनीं। सिक्खी सिदक की मिसाल को रोज़ाना इस तरह ध्यान धरने हेतु याद किया जाता है-- "जिन्हां सिंघां सिंघणीआं ने धरम हेत सीस दित्ते, बंद-बंद कटाए खोपरीआं लुहाईआं, चरखड़ीआं 'ते चढ़े, आरिआं नाल चिराए गए, गुरदुआरिआं दी सेवा लई कुरबानीआं कीतीआं, धरम नहीं हारिआ, सिक्खी केसां सुआसां नाल निबाही, तिन्हां दी कमाई दा धिआन धरके खालसा जी, बोलो जी वाहिगुरू!"

सिक्ख शहादतों की इस श्रृंखला में एक नहीं अनेकों नाम हैं जो वैरियों के साथ रण-भूमि में जूझते हुए शहीद हुए या समकालीन हाकिमों ने शहीद किए। इन शहीदों में दो नाम हैं-- भाई सुबेग सिंघ तथा भाई शाहबाज़ सिंघ।

भाई सुबेग सिंघ लाहौर ज़िले की चूहणीआं तहसील के गांव जंबर के रहने वाले थे। इनको भाई सुबेग सिंघ जंबर के नाम से भी जाना जाता है। भाई सुबेग सिंघ भजन-बंदगी करने

वाले, रहित मर्यादा में परिपक्व, सिक्ख आचरण की प्रतिमा थे। वे पढ़े-लिखे तथा फ़ारसी के विद्वान थे। सरकार में उनकी अच्छी जान-पहचान थी। अपने असर-रसूख के कारण वे ज़मीन आदि के ठेके सरकार से लेते थे। अपनी योग्यता तथा असर-रसूख के कारण वे लाहौर के कोतवाल भी नियुक्त हुए। इस जिम्मेदारी को उन्होंने श्रेष्ठ ढंग से निभाया। उस समय के दौरान लाहौर के निवासी बड़े खुश थे, क्योंकि माहौल शांति पूर्ण बना रहा। भाई सुबेग सिंघ की सिक्खों में भी खास पहचान थी :

तुरक उसे खालसो वल तोरै,
खालसा भी तिस को भल लोरै।
कोई तुरकन परै ज़रूरी काम,
तौ उस भेजै कर कर सलाम।

(श्री गुर पंथ प्रकाश)

सिक्खों के विरुद्ध अत्याचार रुकने का नाम ही नहीं ले रहा था। इन अत्याचारों ने सिक्खों को उनके उसूलों से टस से मस न किया। अत्याचारों का मुकाबला करते हुए सिक्ख और भी बलवान होते गए। मुगल सरकार सिक्खों के साथ निपटने के लिए अपनाये अपने कठोर व्यवहार से थक-हार गई थी। उसने सख्ती से हटकर सिक्खों को जागीरें आदि देकर खुश करने की नीति अपनाई। १७३३ ई में लाहौर के गवर्नर जकरिया खां ने सिक्खों के प्रति सख्ती के बारे में तथा अपनी मुश्किलों के सम्बंध में दिल्ली के बादशाह को खबरें भेजीं। उसने सुझाव दिया कि सिक्खों को जागीर दे दी जाये तथा उनके एक

*अपर सचिव, धर्म प्रचार कमेटी, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर साहिब, फोन : ९८१४८-९८२१२

अगुआ को नवाब का खिताब दे दिया जाये। दिल्ली बादशाह ने जकरिया खां की सलाह मान ली। अब सिक्खों के साथ बातचीत कौन करे? इसकी जिम्मेदारी भाई सुबेग सिंघ पर डाली गई। भाई सुबेग सिंघ श्री अमृतसर में श्री अकाल तख्त साहिब पर जुड़ बैठे सरबत खालसा के पास गये। सरकार से मेल-मिलाप करने के दोष में तनखाह लगवाने तथा सज़ा भुगतने के बाद भाई सुबेग सिंघ ने लाहौर सरकार के प्रस्ताव के बारे में बात की। इस प्रस्ताव के अधीन सरकार द्वारा नवाब का खिताब तथा दियालपुर, कंगणवाला एवं झबाल परगनों की जागीर, जिसमें से एक लाख रुपये की वार्षिक आमदन होती थी, की पेशकश की गई। सिंघों ने इसको एकदम ठुकरा दिया। आखिर भाई सुबेग सिंघ की प्रेरणा से सिक्ख पंथ ने सरकारी पेशकश प्रवान कर ली। उस समय दीवान दरबारा सिंघ को नवाबी के लिए चुना गया, परंतु उन्होंने इंकार कर दिया और कहा, "इस नवाबी में क्या रखा है? हमें तो गुरु ने राज्य देने का वचन किया हुआ है। गुरु का वचन अवश्य पूरा होगा।"

हम को सतिगुर बचन पतिशाही,
हम को जापत ढिग सोऊ आही ॥३६॥
हम राखत पातिशाही दावा,
जां इतको जां अगलो पावा।
जो सतिगुर सिक्खन कही बात,
होगु साईं नहिं खाली जात ॥३७॥

(श्री गुर पंथ प्रकाश)

अन्य प्रमुख सिंघों को भी नवाबी लेने के लिए कहा गया। सभी ने इंकार कर दिया। आखिर यह जिम्मेदारी गुणों तथा सेवा के पुंज एवं योद्धा स कपूर सिंघ पर आ पड़ी। उन्होंने खालसा की आज्ञा से पांच सिंघों के चरणों को नवाबी की खिलअत स्पर्श करवाकर सिरोपा ले लिया :

सिंघ कपूर झलै पक्खो थोई,

क्रिपा नज़र पंथ उस वल होई
पंच भुजंगीअन चरनी छुहाइ,
धरो सीस मोहि पवित्र कराइ ॥४७॥

(श्री गुर पंथ प्रकाश)

इस तरह भाई सुबेग सिंघ के यत्नों से कुछ समय के लिए पंजाब में माहौल ठीक हो गया। इन्हीं दिनों भाई सुबेग सिंघ के परिवार पर और मुसीबत आ पड़ी। उनका १८ वर्षीय नौजवान सुपुत्र भाई शाहबाज़ सिंघ था। वह एक इस्लामिक स्कूल में पढ़ता था। होनहार जवान, बहुत सुंदर एवं समझदार था। इस्लाम धर्म के सिद्धांतों के बारे में उसे बहुत जानकारी थी। वह अंतर-धर्म-दर्शन से पूर्णतः परिचित था। जिस मौलवी से वह विद्या प्राप्त करता था, वो उसे मुसलमान बनाकर अपनी लड़की का रिश्ता उसके साथ करना चाहता था। इसके लिए भाई शाहबाज़ सिंघ को प्रेरित किया गया। उसने मुसलमान बनने से इंकार कर दिया। उस पर झूठा आरोप लगाकर उसे पकड़ लिया। भाई सुबेग सिंघ को भी सिक्खों को सरकारी गुप्त खबरें पहुंचाने का झूठा इलज़ाम लगाकर पकड़ लिया गया।

कुछ समय के लिए केस बंद रहा। जकरिया खां की मृत्यु के बाद उसका पुत्र याहिया खां लाहौर का सूबेदार बना तो उसने लखपत राय को अपना दीवान बनाया। सिक्खों पर पुनः सख्ती का दौर शुरू हो गया। मुल्ला-काजी एवं लखपत राय की उसकाहट पर भाई सुबेग सिंघ का केस दोबारा खोला गया। भाई सुबेग सिंघ तथा उनके सुपुत्र भाई शाहबाज़ सिंघ को गिरफ्तार कर लिया गया। याहिया खां ने भाई सुबेग सिंघ तथा भाई शाहबाज़ सिंघ को अपना धर्म छोड़ने तथा मुसलमान बनने के लिए कहा। अन्य कई तरह के लालच दिए गये। इंकार करने पर चरखड़ी पर चढ़ाने का डर दिया :

कहयो नवाब तुम आवो दीन,

लेवो दाम औ काम औ ज़मीन ॥७॥

नहीं तो मरनों कर मनज़ूर,

चढ़ो चरख गिर होवो चूर।

(श्री गुर पंथ प्रकाश)

पिता-पुत्र दोनों ने इस्लाम धर्म को अपनाने से इंकार कर दिया और वे हर तरह की यातनायें सहन करने के लिए तैयार हो गये। भाई सुबेग सिंघ तथा भाई शाहबाज़ सिंघ ने कहा कि "जैसे आपको अपना धर्म प्रिय है, उसी तरह हमें भी अपना धर्म प्रिय है। मरने का डर नहीं, मृत्यु तो कभी भी आ सकती है।" याहिया खां ने दोनों को चरखड़ी पर चढ़ाने का फरमान काज़ी द्वारा जारी करवाया। पहले दोनों को बारी-बारी से चरखड़ी पर चढ़ाया गया। दोनों सिंघों ने अकाल पुरख की रज़ा में परमात्मा का सिमरन करते हुए यातनायें झेलीं :

ऊंचे चाढ़ फिर बहुत घुमाया,

वाहिगुरू तिन नाहि भुलाया।

जयों जयों मुख ते गुरू उचारे,

अकाल अकाल कर ऊच पुकारे ॥१४॥

(श्री गुर पंथ प्रकाश)

पिता-पुत्र को अलग-अलग करके एक-दूसरे के मुसलमान बनने के बारे में अफवाहें फैलाई गईं। पुत्र को कहा गया कि "तेरी बालक-बुद्धि है। दुनिया देखने की तेरी उम्र है। तेरे पिता ने सब कुछ देख लिया है। तेरी खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने की उम्र है। तू बुद्धिमान है, फ़ारसी पढ़ा हुआ है, इसलिए जिद छोड़कर इस्लाम कबूल कर और सुख ले।"

दीन मुहंमदी कर कबूल तूं सरदारी बड पाहैं।
तूंतो पढ़यो फ़ारसी अरबी बुद्धिवान दिसैहैं।

अभि नवेस कालेस एहु हठ छोड़ क्योन सुख लैहैं।

खाइ पैन लिय पिदर तुमारे बूढा मरनों चैहैं।
खाण पीण दी उमर तुमारी तूं कयों जिंदगी देहैं।

मजब धरम पर मूरख मरहैं चत्रन मरते कोहैं ॥

(पंथ प्रकाश, पृष्ठ ७३८)

दूसरी तरफ भाई सुबेग सिंघ को कहा कि "तू दीन मान ले तथा अपनी जड़ इस दुनिया में बनाये रख। पुत्रों से ही वंश चलती है। तेरी कुल का निशान रह जायेगा।" भाई सुबेग सिंघ ने कहा, "मैंने अपने सुपुत्र को गुरु-शिक्षा दी है कि प्रभु ही बचाता है और मारता भी वही है। जिंदगी से ज्यादा हमें अपना धर्म प्यारा है। धर्म गंवाकर जीने का कोई अर्थ नहीं। गुरु पातशाह ने हमारी खातिर चारों सहिबज़ादे वार दिए, सरवंस वार दिया। मैं धर्म त्याग कर अपनी कुल बचाए रखूं, यह कौन-सी कुल का यश है?"

सिक्खन काज सु गुरु हमारे,

सीस दीओ निज सन परवारै।

चारे पुतर जान कुहाए,

सो चंडी की भेट कराए।

हम कारन गुर कुलहि गवाई,

हम कुल राखैं कौण बडाई ॥२८॥

(श्री गुर पंथ प्रकाश)

पुनः यातनाएं दी जाने लगीं; केश ऊपर बांधे गये; चाबुक मार-मारकर चमड़ी उधेड़ दी गई; चरखड़ी पर दोबारा चढ़ाकर घुमाया गया। भाई शाहबाज़ सिंघ के मुंह से 'अकाल-अकाल' की ऊंची आवाज़ आती रही। आवाज़ कुछ धीमी पड़ी। वो निढाल हो गया। जल्लाद ने उससे पूछा कि "क्या इस्लाम कबूल है?" जल्लाद निढाल हुए भाई शाहबाज़ सिंघ का सर झुका हुआ देखकर समझा कि उसने 'हां' कर दी है। इस पर भाई सुबेग सिंघ की चरखड़ी रोक दी गई। पिता ने पुत्र की ओर देखा। पिता की आंखों में शहादत का नूर देखकर पुत्र की हिम्मत को और भी बल मिला। फिर सिर उठाकर उसने ऊंचे स्वर में जैकारा छोड़ा तथा अकाल-अकाल के नारे गूंजने लगे। याहिया खां

तथा जल्लाद और भी गुस्से में आ गये। उन्होंने फिर तब तक चरखड़ी चलाई जब तक दोनों पिता-पुत्र अकाल पुरख को प्यारे नहीं हो गये। चरखड़ियों पर चढ़कर सिक्खी सिदक को केशों-श्वसों संग निभाने का समय १७४५ ई का था। यह भाई सुबेग सिंह तथा भाई शाहबाज़ सिंह की वीरता, अडोलता का प्रकटावा चरखड़ी को प्यार करते हुए होता है, जब स्वयं कहते हैं— "धन्य है चरखड़ी तथा धन्य है वह घड़ी, जब जीवन गुरु तथा धर्म के लेखे लगे।" फिर यही बोल फूटते हैं :

सुबेग सिंह तब कुरनश करी,
धनं चरखड़ी धनं यह घरी ॥८॥
चाढ़ चरखड़ी हमै गिरावो,
सो अब हम को ढील न लावो।
हम तो गुर के सिक्ख सदावै,
गुर के हेत प्राण भल जावै ॥९॥

(श्री गुर पंथ प्रकाश)

स्रोत-सूचना :

१. अठारहवीं सदी विच बीर परंपरा दा विकास,
प्रिं सतिबीर सिंह, पंजाबी यूनीवर्सिटी,
पटियाला, १९८७.
२. सिक्ख इतिहास, प्रिं तेजा सिंह-डॉ गंडा सिंह,
पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला, १९८५.
३. श्री गुर पंथ प्रकाश कृत भाई रतन सिंह
(भंगू), संपादक डॉ बलवंत सिंह, सिंह ब्रादर्स,
श्री अमृतसर साहिब, २००४
४. पंथ प्रकाश, ज्ञानी गिआन सिंह, भाषा विभाग,
पंजाब, पटियाला, १९८७.
५. महान कोश, भाई कान्ह सिंह नाभा, भाषा
विभाग, पंजाब, पटियाला, १९८१.
६. History of the Sikhs, Dr. Hari Ram Gupta,
Munshiram Manohar Lal, New Delhi, 1978.
७. Sikh Martyrs, Bhagat Lakshman Singh, Lahore
Book Shop, Ludhiana, 1981.



फार्म-४, नियम-८

- | | | | |
|----|------------------------|---|--|
| १. | प्रकाशित करने का स्थान | : | कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर |
| २. | प्रकाशित करने का समय | : | प्रत्येक माह की पहली तारीख |
| ३. | मुद्रक का नाम | : | स. दिलजीत सिंह |
| | राष्ट्रीयता | : | भारतीय |
| | पता | : | अतिरिक्त सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर |
| ४. | प्रकाशक का नाम | : | स. दिलजीत सिंह |
| | राष्ट्रीयता | : | भारतीय |
| | पता | : | अतिरिक्त सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर |
| ५. | संपादक का नाम | : | स. सतविंदर सिंह |
| | राष्ट्रीयता | : | भारतीय |
| | पता | : | संपादक, गुरमति ज्ञान,
शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर |
| ६. | मालिक | : | शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर |
- मैं सतविंदर सिंह घोषणा करता हूँ कि उपरोक्त विवरण मेरी जानकारी अनुसार पूर्णतः सही है।

तारीख -०१/०३/१८

हस्ताक्षर/-

(सतविंदर सिंह)

संपादक, गुरमति ज्ञान।

सरदार बघेल सिंघ

-डॉ हरबंस सिंघ*

सरदार बघेल सिंघ अठारहवीं सदी के उन महान सिक्ख योद्धाओं में से हैं जिन्होंने न सिर्फ पंजाब में खालसा राज स्थापित करने के लिए ज़मीन की तैयारी की, बल्कि सन् १७८३ ई में दिल्ली को जीत कर यहां के ऐतिहासिक गुरुद्वारा साहिबान को कायम किया, जिनके लिए कौम सदा उनकी ऋणी रहेगी।

सरदार बघेल सिंघ सिक्खों की बारह मिसलों में से करोड़ासिंधिया मिसल के जत्थेदार थे। इस मिसल के प्रवर्तक सरदार शाम सिंघ १७३९ ई में नादिर शाह के विरुद्ध लड़ते हुए शहीद हो गये थे। उनके बाद इस मिसल की कमान सरदार करम सिंघ और फिर सरदार करोड़ा सिंघ, गांव पंजगढ़िया ने संभाली। उनके नाम पर ही इस मिसल का नाम करोड़ासिंधिया प्रसिद्ध हुआ। वे बहुत बहादुर और वीर योद्धा थे। उनके समय इस मिसल को बहुत तरक्की नसीब हुई। खरखाबाद तक उनके घोड़ों को रोकने वाला कोई नहीं था। जब ये अहमद शाह अब्दाली के विरुद्ध लड़ते हुए शहीद हो गये तो सरदार बघेल सिंघ के पंथक जज़्बे और फौजी योग्यता को ध्यान में रखते हुए १७६५ ई में उन्हें करोड़ासिंधिया मिसल का जत्थेदार नियुक्त किया गया। A History of the Sikh People में डॉ गोपाल सिंघ लिखते हैं कि "This shows that succession was not always hereditary among the Misals and merit was more the determining factor and even the meanest could rise to the highest position." (पृष्ठ

३८५) प्रिंसीपल सतिबीर सिंघ लिखते हैं कि इस मिसल के सरदारों ने राष्ट्रीय जद्दोजहद में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया था।

सरदार बघेल सिंघ इस मिसल के सबसे शक्तिशाली सरदार थे। उन्होंने दूर-दूर तक अपने इलाके का विस्तार करके करनाल के नज़दीक छलौदी नामक स्थान को अपनी राजधानी बनाया। यह नगर लाडवा से तीन मील उत्तर की तरफ था। उनका राजसी क्षेत्र जलंधर से लेकर गंगा-यमुना दुआब के कई नगरों तक फैला हुआ था। इन इलाकों से उन्हें तीन लाख रुपए सालाना की आमदन थी। मुहम्मद लतीफ के अनुसार उनकी कमान तले १२ हजार घुड़सवार थे, जिनसे उस समय के मुगल, मराठा और रहेले थर-थर कांपते एवं भय खाते थे।

सरदार बघेल सिंघ गांव झबाल, ज़िला श्री अमृतसर साहिब के रहने वाले थे। उनका जन्म १७२५ ई के आस-पास हुआ। कई इतिहासकार उनको हरियाणा (ज़िला गुरदासपुर) का निवासी मानते हैं। उनका ख्याल है कि झबाल में सरदार बघेल सिंघ की बहन सुक्खां ब्याही हुई थी और बाद में वे खुद भी यहीं आकर बस गए थे। भाई रतन सिंघ (भंगू) और ज्ञानी गिआन सिंघ के अनुसार वे धालीवाल जट्ट थे। ज़मीन जोतने और सरकार को लगान देने के मसले पर भाइयों के साथ मतभेद हो जाने के कारण वे घर छोड़ कर दल खालसा में मिल गए। धीरे-धीरे वे अपनी राजसी सूझ-बूझ, साहस

*४८४०, गली नं. ४४, राघवपुरा, करोल बाग, नई दिल्ली-११०००५

और दिलेरी के कारण करोड़सिंधिया मिसल के जत्थेदार बन गए। 'Fall of the Mughal Empire' में सर जादू नाथ सरकार लिखता है कि आने वाले ३५ वर्षों में वे अपनी मिसल के सबसे अधिक क्रियाशील और प्रसिद्धि वाले सरदार थे। ज्ञानी गिआन सिंह ने उनको बहुत हिम्मत वाला और जवां मर्द सरदार लिखा है।

कार्य की आरंभता : मिसल की जत्थेदारी का कार्य-भार संभालते ही उन्होंने जलंधर-दुआब में अपना दबदबा कायम कर लिया। इसके बाद उनका अगला कदम तलवान में एक किला बनाना और वहां एक थाना कायम करना था जिससे आस-पास के इलाकों की सुरक्षा और अमन कायम रखा जा सके। यहां के मियां महमूद खान राजपूत ने मिसलों द्वारा स्थापित 'राखी प्रथा' के अंतर्गत सरदार बघेल सिंह को अपनी सहायता के बदले इलाके की आमदनी का चौथा हिस्सा देना स्वीकार कर लिया। इससे पहले सरदार करोड़ा सिंह ने भी मियां महमूद खान को मिसल की तरफ से सुरक्षा प्रदान की हुई थी।

जलंधर, अंबाला और हरियाणा के उत्तर-पश्चिमी इलाकों पर अपना अधिकार कायम कर लेने के बाद सरदार बघेल सिंह ने करनाल से २० मील दूर छलौदी नामक स्थान पर अपना मुख्य ठिकाना स्थापित किया। यहां से गंगा-यमुना दुआब और दिल्ली के आस-पास के शाही इलाकों पर हमला करना आसान था। उन्होंने पूर्वी पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश के कई नगरों पर कब्जा करके अपनी मिसल की ऐसी धांक जमा ली कि उत्तरी भारत में अहमद शाह अब्दाली की तरफ से नियुक्त किए गए अफगान फौजदार, मुगल, रूहेले और मराठों के अलावा बंगाल की तरफ से दिल्ली की तरफ बढ़ते चले आ रहे अंग्रेज भी उनके साथ मित्रता कायम

करने के लिए तत्पर रहने लगे। राजसी गठजोड़ कायम करने में सरदार बघेल सिंह पहले दर्जे के उस्ताद थे। कई बार इतिहासकारों ने उनके इन गठजोड़ों से गलत निष्कर्ष निकालने की कोशिश की है। वे राजनीति के खेल के सफल खिलाड़ी थे, जिनसे कई बार रूहेले, अफगान, मराठे, मुगल और सिक्ख सरदार भी चकमा खा जाते थे, परंतु उनकी ये कार्यवाहियां कभी भी पंथ-विरोधी या देश-विरोधी नहीं थीं। यह तो शतरंज का खेल था जिसमें वे कभी नहीं हारे थे।

१७६१ ई में अहमद शाह अब्दाली ने मराठों को पानीपत की तीसरी लड़ाई में करारी हार देकर उनके समूचे उत्तरी भारत पर राज्य करने के सपने को मिट्टी में मिला दिया था। ५ फरवरी, १७६२ ई को बड़े घल्लूघारे के अवसर पर लगभग ३० हजार सिंघों, सिक्ख बच्चों और स्त्रियों को कत्ल करके अब्दाली समझ बैठा था कि अब यह कौम भी दोबारा उठने के काबिल नहीं रहेगी। इतना बड़ा नुकसान हो जाने के बावजूद भी सिक्ख बहुत जल्दी संभल गए और उन्होंने जनवरी, १७६४ ई में सरहिंद जीत कर तथा अप्रैल, १७६४ ई में श्री अमृतसर साहिब में वैसाखी का पर्व मना कर यह साबित कर दिया कि कोई भी राजसी शक्ति या उनकी तरफ से किया गया जुल्म और अत्याचार उनको खत्म नहीं कर सकता था। जितनी देर तक अहमद शाह अब्दाली हिंदोस्तान और विशेष कर पंजाब पर हमले करता रहा, सिक्ख मिसलदार एक-दूसरे की बढ़-चढ़ कर मदद करते रहे। उनका निशाना दुश्मन को हराना था और देश में से भगाना था। फरवरी, १७६४ ई में सरदार जस्सा सिंह आहलूवालिया और सरदार बघेल सिंह ने ४० हजार सिंघों की सेना के साथ बूड़ीए के पोताश्रय

से यमुना पार की और सहारनपुर पर हमला बोल दिया। यह इलाका रहेले सरदार नजीब-उ-दौला के अधिकार में था। उसने अहमद शाह के हमलों के समय दुर्रानियों की बहुत मदद की थी। घमासान लड़ाई के बाद २० फरवरी, १७६४ ई को सिक्खों ने इस नगर पर अपना अधिकार जमा लिया और आस-पास के इलाकों को तहस-नहस कर दिया। इस मुहिम में सरदार बघेल सिंह के साथ सरदार जस्सा सिंह आहलूवालिया के सिवाय सरदार खुशहाल सिंह, सरदार तारा सिंह, सरदार करोड़ा सिंह, सरदार गुरबखश सिंह, सरदार भंगा सिंह, सरदार करम सिंह और सरदार राए सिंह आदि सिक्ख सरदार भी शामिल थे। इस हमले के दौरान उन्होंने शामली, कांघला, अंबली, मीरापुर, देवबंद, मुजफ्फरनगर, ज्वालापुर, कनखल, लंडोरा और नजीबाबाद आदि नगरों को जीत कर नजीब-उ-दौला के लिए बहुत भारी परेशानी पैदा कर दी थी। उन्होंने नगीना, मुरादाबाद, चंदौसी, अनूप शहर और गढ़मुक्तेश्वर पर हमला करके एक ही झटके में अवध और दिल्ली के लिए भी खतरा पैदा कर दिया था। अपने हारे हुए इन इलाकों को दोबारा हासिल करने के लिए नजीब-उ-दौला ने सिक्ख सरदारों को ११ लाख रुपया नज़राना भेंट करके उनकी अधीनता स्वीकार कर ली। दल खालसा अपने मिशन की इस बड़ी सफलता के बाद पंजाब वापिस लौट आया।

१७६७ ई में अहमदशाह अब्दाली ने हिंदोस्तान पर फिर हमला किया। उसने अपनी विशाल सेना के साथ दरिया ब्यास के किनारे पड़ाव किया। नजीब-उ-दौला अपनी फौज लेकर उसकी सेवा में उपस्थित हुआ। किसी तरह भी न दबाए जा सकने वाले सिक्ख सरदारों ने इस चुनौती को स्वीकार करते हुए नजीब-उ-दौला के गंगा-यमुना दुआब वाले इलाकों पर हमला

बोल दिया। ऐसा इसलिए किया गया कि अपने इलाकों को खतरे में पड़ा देख कर नजीब वापिस भागने की कोशिश करेगा। दूसरा मंतव्य अब्दाली की सैनिक शक्ति को कमज़ोर करना था ताकि वह पंजाब में सिक्खों को बहुत नुकसान न पहुंचा सके। सिक्ख सरदार अंबेठा, ननौती और मेरठ को लताड़ते हुए शामली तक पहुंच गए। नजीब-उ-दौला ने अपने इलाकों की सुरक्षा के लिए अहमद शाह अब्दाली को विनती की। अब्दाली ने अपने बड़े जरनैल जहान खान को आठ हजार सैनिक देकर दुआब के इलाके में भेजा जिससे वह सिक्खों को दबा सके। उसके साथ जाबता खान के भी पांच हजार सिपाही थे। डॉ. एन. के सिन्हा लिखता है कि अब्दाली और नजीब की फौज के साथ हुए मुकाबले में एक सिक्ख सरदार और बहुत-से सिक्ख सैनिक मारे गए। इस लड़ाई में सरदार बघेल सिंह गंभीर रूप से घायल हो गए। सिक्खों द्वारा की गई इस फौजी कार्यवाही के कारण अहमद शाह अब्दाली का यह हमला असफल हो गया और उसे पंजाब से निराश ही काबुल वापिस लौटना पड़ा।

अमन-सुरक्षा कायम रखने की दृष्टि से सरदार बघेल सिंह ने जीते हुए इलाकों में पुलिस-चौकियां स्थापित कीं। ये इलाके कई दशकों से बदअमनी का शिकार होते चले आ रहे थे। वे एक दिलेर और निर्भय योद्धा ही नहीं, बल्कि कुशल प्रबंधक भी थे। देश में हर तरफ फैली अफरा-तफरी के कारण ये इंतज़ाम ज्यादा देर तक कायम न रह सके।

हिंदोस्तानी औरतों को छुड़ाना : सरदार बघेल सिंह के सिक्ख मिसलदारों के साथ अच्छे सम्बंध थे। यही कारण है कि उनकी कई फौजी मुहिमों के समय सरदार जस्सा सिंह आहलूवालिया और सरदार जस्सा सिंह रामगढ़िया जैसे सिक्ख सरदार भी उनके साथ थे। इसी कारण इनकी

सांझी शक्ति के आगे किसी भी हमलावर का टिक सकना आसान नहीं था। अगले ही साल जब अहमद शाह अब्दाली सिआलकोट और पंजाब के अन्य इलाकों में से सैकड़ों औरतों को बंदी बनाकर काबुल लौट रहा था सरदार बघेल सिंह, सरदार जस्सा सिंह आहलूवालिया और सरदार चढ़त सिंह शुकरचकिया उसकी सेना पर टूट पड़े और उनसे हिंदोस्तानी औरतों को छुड़वा लिया, जिनको काबुल, कंधार और गज़नी के बाज़ारों में बेचा जाना था। सिक्खों के साथ हुई इस लड़ाई में अहमद शाह अब्दाली को बहुत भारी नुकसान उठाना पड़ा। वह भी हैरान था कि जिसकी ताकत के आगे मुगल और मराठा सरदार घुटने टेक चुके थे उसे इन मुठ्ठी भर सिक्ख सरदारों ने परेशान कर दिया था। ये (सिक्ख) उसके हिंदोस्तान पर राज्य करने के मंसूबों के आगे दीवार बन कर खड़े हो गए थे।

पटियाला के साथ सम्बंध : अपने आठवें हमले के दौरान अहमद शाह अब्दाली ने कोशिश की थी कि पंजाब की मिसलों के सिक्ख सरदार उसकी अधीनता स्वीकार कर लें और उसके साथ समझौता कर लें, परंतु कोई भी प्रमुख मिसलदार ऐसी शर्त मानने के लिए आगे न बढ़ा। केवल पटियाला का महाराजा अमर सिंह ही दुर्रानी हमलावर अहमद शाह अब्दाली को सरहिंद मिला और उसकी शर्तें मानकर उससे महाराजा का खिताब हासिल किया। यह बात मिसलों के सिक्ख सरदारों को अच्छी न लगी। सन् १७६७ ई की गर्मियों में जब सरदार बघेल सिंह, सरदार जस्सा सिंह आहलूवालिया तथा कुछ अन्य सिक्ख सरदार मालवा में विचरण करते हुए पटियाला पहुंचे तो महाराजा अमर सिंह अपनी राजधानी में नहीं था। सरदार बघेल सिंह चाहते थे कि इस अवसर का फायदा उठा कर सरदार अमर सिंह को बरतर्फ

करके पटियाला पर कब्ज़ा कर लेना चाहिए। उन्होंने यह बात सरदार जस्सा सिंह आहलूवालिया से कही। सरदार जस्सा सिंह ने करोड़सिंधिया मिसल के सरदार की इस सलाह को यह कह कर नज़र-अंदाज़ कर दिया कि हमारा निशाना किसी विदेशी को पंजाब में न टिकने देने का है। वाहिगुरु की कृपा से हम इस मामले में अहमद शाह अब्दाली की सारी कोशिशों को असफल कर चुके हैं। अब हमें अपनी ताकत अपने ही भाइयों के विरुद्ध नहीं इस्तेमाल करनी चाहिए।

अहमद शाह अब्दाली ने हिंदोस्तान पर आखिरी हमला १७६९ ई में किया। वह दरिया चनाब तक ही पहुंचा था कि घरेलू हालात खराब हो जाने के कारण उसे तुरंत अफगानिस्तान लौटना पड़ा। उसके वापिस चले जाने के बाद अब विदेशी हमलों का डर खत्म हो गया। अब मिसलों के सरदार अपने-अपने इलाके बढ़ाने की होड़ में लग गए। ज्यादा दौलत और ज़मीन हासिल करने की दौड़ में उन्होंने एक-दूसरे के इलाकों पर हमले करने शुरू कर दिए। इस स्थिति का लाभ उठाते हुए १७६९ ई में पटियाला के महाराजा ने करोड़सिंधिया मिसल के कुछ गांवों, जिनमें लालरू, भूनी और मुल्लापुर शामिल थे, पर कब्ज़ा कर लिया। सरदार बघेल सिंह ने सरदार दुलचा सिंह, सरदार सुखू सिंह, सरदार भाग सिंह और सरदार भंगा सिंह इत्यादि की सहायता से पटियाला पर हमला बोल दिया। दोनों दलों की गांव घुड़ाम के नज़दीक जंग हुई, परंतु सरदार चैन सिंह द्वारा बीच-बचाव करने के कारण दोनों धड़ों में अमन कायम हो गया।

ब्राह्मण की बेटी छुड़वायी : १७७३ ई में सरदार बघेल सिंह ने यमुना पार के इलाके जलालाबाद लोहारी पर हमला किया। यहां का

हाकिम मीर हसन खान बड़ा ज़ालिम और अय्याश तबियत का व्यक्ति था। उसने अपने घर में ब्राह्मण परिवार की एक लड़की को ज़बरदस्ती रखा हुआ था। ११ दिसंबर, १७७३ ई को हुई लड़ाई में मीर हसन मारा गया। सरदार बघेल सिंघ ने उस लड़की को छुड़वा कर और 'खालसे की बेटा' का मान देकर उसे उसके मां-बाप के घर भेज दिया। अठारहवीं सदी की सिक्ख लहर को दर्शाते हुए 'प्राचीन पंथ प्रकाश' के कर्ता भाई रतन सिंघ (भंगू) लिखते हैं कि सिक्ख-अफगान और सिक्ख-मुगल संघर्ष में खालसे ने सदा जुल्म की विरोधता की और गरीब एवं पीड़ित का पक्ष लिया। जलालाबाद के ज़ालिम सैयद से ब्राह्मण की बेटा को छुड़वाने के प्रसंग को उन्होंने 'प्राचीन पंथ प्रकाश' में बड़े विस्तार से दर्ज किया है। इस सम्बंध में वे लिखते हैं :

सुनो साखी और सिंघन की,
जिन कीनो बिप उपकार।
दिल्ली ढिग जुलमी हुती,
जाइ सय्यद दीनो मार।
मारये सय्यद जब खालसे,
तौ भइओ तरकन तरथल्ल।
पूरब दक्खन लग मरे,
गई गल्ल यह चल्ल।

उस सैयद को पार बुला देने के बाद सिंघों ने उस कलाल को भी सज़ा दी जो पैसे के लालच में पराई बेटियों का पता-ठिकाना अधिकारियों को दिया करता था :

सो भी सिंघन फड़ तुरत मंगाया,
पाइ रस्सा उस फाहै टंगाया।
जै जै कार तहि पंथे भए,
बहु तुरकन घर सयापे पए।

इसके बाद सरदार बघेल सिंघ की कमान तले खालसा फौज अलीगढ़, खुर्जा, चंदौसी,

हाथरस और इटावा को लताड़ती हुई फरुखाबाद पहुंची। यहां के नवाब ईसा खान के साथ तीन दिन तक जमकर लड़ाई हुई। फिर वह मैदान छोड़ कर भाग गया। फरुखाबाद पर कब्ज़ा हो जाने के बाद खालसा फौज मुरादाबाद, अनूप शहर, बुलंद शहर, बिजनौर आदि स्थानों के हाकिमों को मार मुकाती और उनसे नज़राने वसूल करती पंजाब लौट आई। इन लड़ाइयों में अनेक सिक्ख सैनिक भी शहीद हुए थे।

गंगा-यमुना दुआब से वापिस लौट कर सरदार बघेल सिंघ ने दुआबा बिसत जलंधर के गांव वलवन के रईस मुहम्मद खान को, जो सरदार करोड़ा सिंघ के समय से ही इस मिसल के मातहत था और जिसने कुछ समय से कर देना बंद कर दिया था, जा घेरा। बदइतज़ामी के कारण उसे उसकी जागीर से बेदखल कर दिया गया। सरदार बघेल सिंघ ने उसके इलाके को अपने साथ मिला लिया। इसी तरह दीवान सिंघ नूरमहिल वाले से उसका इलाका ले लिया। सुरक्षा-इंतज़ाम मजबूत करने के लिए गांव वलवन में एक किला बनाया गया जहां सिक्ख सैनिकों को तैनात किया गया।

गंगा-यमुना के रहले : ३१ अक्टूबर, सन् १७७० ई को नजीब-उ-दौला की मौत हो गई। उसके बाद उसका पुत्र जाबता खान गंगा-यमुना दुआब के इलाके का हाकिम बन गया। सिक्खों के प्रति उसके बदलते तेवर को देख कर सरदार बघेल सिंघ ने अप्रैल, १७७५ ई में अपने साथियों—सरदार राए सिंघ भंगी और सरदार तारा सिंघ गैबा के साथ मिलकर उसके इलाके पर हमला बोल दिया। उन्होंने गांव गंगो, ननूताह और देवबंद के बाद गौसगढ़ को जा घेरा, जहां जाबता खान छिपा बैठा था। गौसगढ़ उसका हेड क्वार्टर था। इससे पहले भी खालसे ने उसके पिता नजीब-उ-दौला को अपने अधीन

करके ११ लाख रुपया नज़राना वसूल किया था। अब जाबता खान ने किसी बड़ी तबाही से डरते हुए भारी रकम देकर सिंधों के साथ समझौता कर लिया। डॉ. एन. के. सिन्हा लिखते हैं कि उसने ५० हजार रुपए नज़राना भेंट कर सिक्खों की अधीनता स्वीकार कर ली। इसके साथ ही उसने सरदार बघेल सिंध को सामूहिक फौजों के साथ दिल्ली शासन के अधीन इलाकों पर हमला करने की भी पेशकश की। जाबता खान के साथ हुए इस समझौते के बाद सिक्खों और रूहेलों की फौज दिल्ली की तरफ चल पड़ी। १७७६ ई में मुजफ्फरनगर नामक स्थान पर उनका मुकाबला शाही फौजों के साथ हुआ, जिसमें शाही सेना बुरी तरह से हार कर दिल्ली की तरफ भाग गई।

शाही फौजों का पटियाला पर हमला : १७७९ ई के पतझड़ में जब मुगलों की एक तगड़ी फौज ने शहजादा फरखंदा बख्त और वजीर अब्दुल अहद खान की कमान तले पटियाला पर हमला बोला तो सरदार बघेल सिंध अपने साथियों-- सरदार राए सिंध बूरीआ, सरदार भंगा सिंध थानेसर और सरदार भाग सिंध जींद के साथ उनको करनाल नामक स्थान पर मिला और पटियाला के विरुद्ध उनकी मदद करने के लिए राजी हो गया। उसके मन में सरदार अमर सिंध के प्रति रोष था कि उसने विदेशी हमलावर की शर्तें मान कर उससे महाराजगी का खिताब क्यों लिया था और दूसरा यह कि १७६९ ई में उसने करोड़सिंधिया मिसल के कई गांवों पर अकारण हमला बोल दिया था। मुगलों और सिक्ख सरदारों की फौज ने आगे बढ़कर पटियाला को चारों तरफ से घेर लिया। पटियाला पर ज़बरदस्त हमला हुआ देख कर सरदार अमर सिंध किसी तरह गांव लाहल नामक स्थान पर सरदार बघेल सिंध को मिला।

न केवल उसने अपने किए पर अफसोस ही प्रकट किया बल्कि अपने पुत्र साहिब सिंध को उनके हाथों अमृत छकवा कर खालसे के प्रति वफादार रहने का वचन भी दिया। अमर सिंध की अधीनता और उसके द्वारा पंथ के प्रति वफादार रहने के भरोसे के बाद सरदार बघेल सिंध ने पटियाला को नुकसान न पहुंचाने का फैसला कर लिया। जब इस नई स्थिति का पता मुगल जरनैल अब्दुल अहद खान को चला तो वह डर गया। उसे यह भी पता चल चुका था कि महाराजा अमर सिंध की विनती पर सतलुज पार से माझा के इलाके में से सरदार जस्सा सिंध आहलूवालिया की कमान तले एक तगड़ी फौज उनके विरुद्ध लड़ने के लिए आ रही है। वह पटियाला का घेरा उठा कर दिल्ली की तरफ भाग जाना चाहता था। उसे यह भी खतरा था कि कहीं आ रहे सिक्ख सरदार उसकी सेना पर हमला बोल कर उसको रास्ते में ही खत्म न कर दें। उसने सरदार बघेल सिंध को मध्यस्थ बना कर बात खत्म करनी चाही। बुरे फंसे अहद खान से फायदा लेने का यह अच्छा मौका था। उसने मुगल जरनैल को साफ कह दिया कि जब तक माझा क्षेत्र से आ रहे सरदारों को भारी नज़राना न दिया गया वे वापिस नहीं जाएंगे। अब्दुल अहद खान ने सरदार बघेल सिंध को इस शर्त पर ७ लाख रुपया देना मंजूर कर लिया कि दिल्ली वापिस लौटते समय उसकी सेना को कोई नुकसान नहीं पहुंचाया जायेगा। इस तरह दिल्ली दरबार की तरफ से पंजाब की रियासतों को अपने कब्जे में करने की यह योजना बुरी तरह से फेल हो गई।

कई इतिहासकारों ने सरदार बघेल सिंध द्वारा शाही फौजों का साथ देने और उनको पटियाला पर हमला करने के लिए उकसाने वाले किरदार की देश और पंथ-विरोधी कार्यवाही

कह कर निंदा की है, परंतु डॉ गंडा सिंघ के अनुसार यह तो शतरंज का खेल था, जिसमें एक तरफ मैदाने-जंग का प्रसिद्ध योद्धा झबालिया सरदार बघेल सिंघ था और दूसरी तरफ अव्वल दर्जे का कायर तथा स्वार्थी अब्दुल अहद खान था, जो सिक्खों में फूट डाल कर सतलुज के इस पार तक शाह आलम के राज्य को फिर से कायम कर देने के सपने ले रहा था। सर जादू नाथ सरकार भी इस बात को मानता है कि "मूर्ख अब्दुल अहद खान (सरदार) बघेल सिंघ के जाल में फंस गया। and the old fool swallowed the bait." इस बात को स्पष्ट करते हुए डॉ गंडा सिंघ लिखते हैं कि "(दिल्ली का वजीर) अब्दुल अहद खान सरदार बघेल सिंघ के दांव में आ गया और उसने मछलियां पकड़ने वाली फेंकी हुई कुंडी के साथ लगे मांस के टुकड़े को मुंह में डाल लिया तथा वह कुंडी अब्दुल अहद खान के गले में फंस गई।" ज्ञानी गिआन सिंघ ने सरदार बघेल सिंघ के राजसी पैतरो को बयान करते हुए लिखा है कि "इसी तरह जब कभी भी दिल्ली की तरफ से कोई हमला होने लगता तब सरदार बघेल सिंघ उनके साथ मिल जाता रहा, किंतु जैसे ही (उनकी) सेना पंजाब पहुंचती और चारों तरफ से सिक्खों में घिर जाती, तभी सरदार बघेल सिंघ खालसे को हर्जाना दिला कर फौज को वापिस कर देते।

जिस तरह कि सरदार बघेल सिंघ ने इक्कार किया था उसी अनुसार शाही सेना को वापिस दिल्ली लौटते समय किसी तरह भी परेशान न किया गया। अब्दुल अहद खान से मिले पैसे को सरदारों में बांट दिया गया। डॉ गंडा सिंघ के अनुसार शाही सेना ५ नवंबर, १७७९ ई को दिल्ली पहुंच गई। उसके सही सलामत वापिस पहुंच जाने पर शाह आलम,

मुगल दरबारियों और शाही परिवार के लोगों ने सुख की सांस ली। उनका इस तरह पंजाब से खाली हाथ लौट जाना बड़ा निरादरी और बदनामी भरा था। इस घटना ने मिसलदारों के हौसले और बुलंद कर दिए। जब अप्रैल, १७८१ ई में मुगल प्रधानमंत्री के एक करीबी रिश्तेदार मिर्जा शाफी ने लाडवा से १० किलोमीटर दूर दक्षिण में इंदरी की सिक्ख फौजी चौकी पर कब्जा कर लिया तो सरदार बघेल सिंघ ने न सिर्फ इस बात का विरोध ही प्रकट किया बल्कि बदले की कार्यवाही करके शाहबाद के खलील बेग खान को हथियार फेंकने पर मजबूर भी कर दिया। उसके पास ३०० घोड़े, ८०० पैदल सवार और २ तोपें भी थीं। खलील बेग पर हुए हमले के कारण दिल्ली की मुगल हकूमत के लिए भी नये खतरे पैदा हो गए। पूर्वी पंजाब और गंगा-यमुना दुआब पर अपनी प्रभुता स्थापित कर लेने के बाद अब सरदार बघेल सिंघ की नज़र दिल्ली की तरफ थी।

दिल्ली पर हमले : १७६५ ई से लेकर १७८७ ई के मध्य सिक्खों ने दिल्ली पर १५ बार हमले किए। इनमें से बहुत-से हमले करोड़सिंधिया मिसल के सरदार बघेल सिंघ ने किए थे। मुगल हकूमत दिन-ब-दिन कमजोर होती चली जा रही थी। दिल्ली पर शाह आलम दूसरे का राज्य था। वह बड़ा कमजोर और अय्याश किस्म का बादशाह था। उसके दरबारी भी कायर, मौकाप्रस्त और नालायक थे। सरदार बघेल सिंघ ऐसे हालात का फायदा उठाना चाहते थे। उन्होंने दिल्ली पर हमला १८ जनवरी, १७७४ ई को किया। बेशक उनकी फौज यमुना के अगले पार शहादरा तक पहुंच गई थी, परंतु अभी सैनिक दृष्टि से हालात को अनुकूल न समझ कर वह दिल्ली शहर में दाखिल न हुई। अपनी फौज के लिए रसद-पानी और वित्तीय ज़रूरतों को पूरा

करने के लिए वे शाहदरा के अमीर व्यापारियों से नज़राने लेकर वापिस पंजाब लौट गए। वापसी में उन्होंने देवबंद पर हमला किया और फिर गौसगढ़ के नवाब से ५० हजार रुपए सालाना वसूल किए।

सरदार बघेल सिंघ ने दिल्ली पर दूसरा हमला १५ जुलाई, १७७५ ई को किया। उन्होंने २२ अप्रैल को बेगी के स्थान से यमुना पार की थी। इस बार सरदार बघेल सिंघ के साथ सरदार तारा सिंघ गैबा और सरदार राए सिंघ भंगी भी थे। इस बार उनकी फौज शहर की घनी आबादी वाले इलाके पहाड़गंज और जय सिंह पुरा (मौजूदा गुरुद्वारा श्री बंगला साहिब वाली जगह) तक पहुंच गई। यहां खालसा फौज की मुगल सेना के साथ झड़प हुई, जिसमें शाही टुकड़ी हार खाकर लाल किले की तरफ भाग गई। दोनों तरफ से लगभग ६० आदमी मारे गए। लगता है कि इन आरंभिक हमलों के दौरान सरदार बघेल सिंघ दिल्ली की भौगोलिक स्थिति और शाही फौज की शक्ति का जायज़ा ले रहे थे, ताकि आने वाले समय में लाल किले पर सफल हमला बोला जा सके। कुछ दिन दिल्ली रुक कर वे २५ जुलाई, १७७५ ई को वापिस पंजाब लौट गये।

सिक्खों की इन साहसपूर्ण और बेरोक गतिविधियों पर अंकुश लगाने के लिए दिल्ली के वज़ीर अब्दुल अहद खान ने अपने भाई अब्दुल कासिम को सहारनपुर का फौज़दार नियुक्त कर दिया। उसका काम जाबता खान और सिक्खों को दबाना था। इस नियुक्ति की खबर मिलते ही जाबता खान ने सरदार बघेल सिंघ से विनती की कि वह अब्दुल कासिम के विरुद्ध उसकी मदद करे। इससे पहले भी जाबता खान नज़राना भेंट कर सिक्खों की अधीनता स्वीकार कर चुका था। सरदार बघेल सिंघ कैथल के

सरदार देसू सिंघ, सरदार राए सिंघ, सरदार दुलचा सिंघ, सरदार दीवान सिंघ और कुछ अन्य सिक्ख सरदारों को साथ लेकर जाबता खान की मदद के लिए पहुंच गए। ११ अप्रैल, १७७६ ई को अमीर नगर के स्थान पर दोनों दलों में फैसलाकुन लड़ाई हुई जिसमें अब्दुल कासिम खान मारा गया और शाही सेना मैदान छोड़ कर दिल्ली की तरफ भाग गई। इसके बाद सरदार बघेल सिंघ ने अलीगढ़ और कासगंज पर हमला कर वहां के मुगल अधिकारियों से भारी रकम वसूल की। गंगा-दुआब इलाके में कुछ महीने विचरण करने के बाद वे जून, १७७६ ई में पंजाब वापिस लौट गये।

शाह आलम के साथ संधि : १२ अप्रैल, १७८१ ई को सरदार बघेल सिंघ ने दिल्ली से ३२ किलोमीटर दूर उत्तर दिशा में स्थित बागपत पर हमला बोला। वहां से वे आगे बढ़ते हुए खेखरा और फिर बिना रोक-टोक के शाहदरा एवं पटपड़गंज तक पहुंच गए।

मुगल बादशाह शाह आलम ने सिक्खों की तरफ से दिल्ली के इर्द-गिर्द लगातार होते इन हमलों से डर कर सिक्खों के साथ संधि कर ली, जिसके अनुसार गंगा-यमुना के मध्य वाले इलाकों पर उनके अधिकार को मान लिया गया। इस संधि की दूसरी शर्त के मुताबिक इस इलाके की कुल आमदनी का आठवां हिस्सा सिक्खों को मिलना शुरू हो गया, क्योंकि मुगल बादशाह और स्थानीय कर्मचारी अपनी नीयत से खरे नहीं थे, इसलिए संधि की ये शर्त एक साल से अधिक न चल सकी और टूट गई।

उधर अवध का नवाब और अंग्रेज भी सिक्खों की बढ़ रही ताकत तथा बदल रही स्थिति को बड़ी गंभीरता के साथ देख रहे थे। अवध से पार बैठे अंग्रेज सरदार बघेल सिंघ के साथ दोस्ती के चाहवान तो हो सकते थे परंतु

वे अभी इस स्थिति में नहीं थे कि उनके साथ लड़ाई छेड़ कर उनकी गतिविधियों पर कोई रोक लगा सकते। ये दोनों ताकतें गंगा पार डरी बैठी थीं।

दिल्ली की जीत और ऐतिहासिक गुरुद्वारों की स्थापना : दिल्ली के लाल किले पर सफल हमला करने से पहले उन्होंने एक बार फिर गंगा-यमुना दुआब के कई नगरों पर हमला किया। अप्रैल, १७८१ ई में शाह आलम के साथ संधि हो जाने के बावजूद भी इस इलाके ने सिक्खों को आमदनी का आठवां हिस्सा नहीं भेजा था। सरदार बघेल सिंह ने फरवरी १७८३ ई में अलीगढ़, टुंडला, हाथरस, खुरजा, शिकोहाबाद, फरुखाबाद आदि नगरों पर हमला कर यहां से ३३ हजार रुपए की एक छड़ी और बहुत सारी दौलत हासिल की। इस पैसे में से एक लाख रुपया श्री हरिमंदर साहिब के निर्माण के लिए भेज दिया गया, जिसको बड़े घल्लूघारे के अवसर पर अहमद शाह अब्दाली ने तोपों से उड़ा कर नष्ट कर दिया था। सरदार बघेल सिंह ४० हजार सिक्ख फौज को साथ लेकर ८ मार्च, सन् १७८३ ई को दिल्ली में दाखिल हुए। उनकी फौज ने दरिया यमुना को बुराड़ी घाटी से पार कर नगर में प्रवेश किया था। उन्होंने अपनी फौज को तीन भागों में बांटा, जिसमें से पांच हजार की एक टुकड़ी मजनूं टिल्ला नामक स्थान पर तैनात की गई और पांच हजार की दूसरी टुकड़ी अजमेरी गेट की तरफ भेजी गई। बाकी ३० हजार फौज के साथ उन्होंने शहर के उस भाग में पड़ाव किया जिसको आजकल तीस हजारी कहा जाता है। यह जगह दिल्ली की पुरानी सब्जी मंडी और कश्मीरी गेट के मध्य है। सरदार बघेल सिंह की तीस हजार फौज के यहां रुकने के कारण ही इस जगह का नाम तीस हजारी प्रसिद्ध हुआ। इस बार सरदार

बघेल सिंह को सरदार जस्सा सिंह आहलूवालिया, सरदार जस्सा सिंह रामगढ़िया और सरदार राए सिंह भंगी जैसे सिक्ख सरदारों का भी समर्थन हासिल था।

सबसे पहले खालसे की विशाल सेना ने मल्लिका गंज, मुगलपुरा और सब्जी मंडी आदि इलाकों पर अपना कब्ज़ा कायम किया। मुगलपुरा में शाही सेना के बहुत-से सिपाही मारे गए। शाह आलम द्वारा भेजे गए शहज़ादा मिर्जा शिकोह ने सिक्खों को किला महताबपुर नामक स्थान पर रोकने की कोशिश की, परंतु वह हार खाकर लाल किले में भाग गया। इसके बाद खालसा फौज ने लाल किले का रुख किया। दूसरे दस्ते ने अजमेरी गेट की तरफ से शहर पर हमला बोल दिया। सिंधों के आने की खबर सुनकर मुगल दरबारी और शाह आलम दूसरा मुकाबला करने की जगह किले के अंदरूनी भागों में जाकर छिप गए। सरदार बघेल सिंह अपनी विजेता फौज के साथ ११ मार्च, १७८३ ई को लाल किले में दाखिल हुए। लाहौरी दरवाज़ा, मीना बाज़ार और नकारखाना लांघ कर वे दीवान-ए-आम में पहुंचे, जहां कभी शाहजहां, औरंगज़ेब और बहादुर शाह जैसे मुगल बादशाह अपना दरबार लगाया करते थे। दीवान-ए-आम पर कब्ज़ा कर लेने के बाद किले के मुख्य द्वार पर खालसाई झंडा झुलाया गया। दीवान-ए-आम में दरबार लगा कर दल खालसा के बुजुर्ग नेता सरदार जस्सा सिंह आहलूवालिया को सुलतान घोषित किया गया। उनके साथ पांच प्रमुख सरदारों (पांच प्यारों) को बिठाया गया, जिनके नेतृत्व में खालसे ने दिल्ली को जीता था। श्री गुरु गोबिंद सिंह जी के ज्योति-जोत समा जाने के बाद खालसे की अब तक की प्राप्ति में से यह सबसे बड़ी सफलता थी। जिस लाल किले में से १७१६ ई में बादशाह फरख्सियर के हुक्म से बाबा

बंदा सिंघ बहादुर और उनके ७४० साथी सिंघों को शहीद किया गया था, आज वही लाल किला खालसे के कदमों में था और यहां का मुगल बादशाह खालसे से अपनी जान और अपने राज्य की सलामती की भिक्षा मांग रहा था।

लाल किले पर सिंघों का कब्ज़ा हो जाने के बाद में शाह आलम दूसरे ने अपने वकील राम दयाल और बेगम समरू के माध्यम से सिक्ख सरदारों के साथ संधि की बात चलाई।

बेगम समरू बहुत बुद्धिमान थी और राजसी क्षेत्र की अच्छी खिलाड़ी थी। उसका मुगल दरबार में अच्छा-खासा रसूख था। शाह आलम ने उसे विशेष रूप से सरदाना से बुलाया था। सरदाना की जागीर उसके पति को मुगलों द्वारा दी गई थी। बेगम समरू ने सरदार बघेल सिंघ को भाई बना कर दो बातों की मांग की:-
१. शाह आलम की ज़िंदगी को कोई नुकसान न पहुंचाया जाए।

२. लाल किले पर शाह आलम का अधिकार बना रहने दिया जाए।

इन दो बड़ी मांगों के मुकाबले सरदार बघेल सिंघ ने दिल्ली में सिक्ख ऐतिहासिक स्थानों की प्राप्ति और वहां पर योग्य यादगारें कायम करने को प्राथमिकता दी। उनकी तरफ से शाह आलम के आगे रखी गई चार शर्तों में से पहली शर्त यह थी कि दिल्ली के वे सभी स्थान खालसे को सौंप दिए जाएं, जिनका सम्बंध गुरु साहिबान के दिल्ली भ्रमण या श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शहादत के साथ जुड़ा हुआ है। इस नगरी में पांच गुरु साहिबान-- श्री गुरु नानक देव जी, श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब, श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब, श्री गुरु तेग बहादर साहिब और श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के चरण पड़े थे। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के ज्योति-जोत समा जाने के बाद यहां पर माता सुंदरी जी एवं माता साहिब

कौर जी काफी लंबे समय तक रहे और यहीं परलोक सिंघारे थे। इसी नगर में बाबा बंदा सिंघ बहादुर और उनके साथी सिंघों को शहीद किया गया था।

सरदार बघेल सिंघ की तरफ से रखी गई दूसरी शर्त यह थी कि इन स्थानों की निशानदेही हो जाने के बाद इस संबंधी शाही फरमान जारी किया जाए और पंथ को अपने गुरु साहिबान की यादगारें कायम करने की आज्ञा दी जाए। तब ऐसे स्थानों की संख्या सात आंकी गई थी।

तीसरी शर्त यह थी कि शहर की कोतवाली खालसा के सुपुर्द की जाए और दिल्ली में माल की बिक्री से इकट्ठी होने वाली चुंगी में से एक रुपए में से छः आने (३७.५ प्रतिशत) के हिसाब से सिक्खों को पैसा दिया जाए। यही पैसा गुरुद्वारों के निर्माण और फौज की तनखाह आदि देने पर खर्च किया जाना था।

सरदार बघेल सिंघ की तरफ से रखी गई चौथी शर्त यह थी कि जितनी देर तक दिल्ली के गुरुद्वारे स्थापित नहीं हो जाते उतनी देर तक उनके चार हज़ार सिक्ख सैनिक दिल्ली में ही टिके रहेंगे। इन सैनिकों का खर्च शाही खज़ाने में से किया जाएगा।

ये सभी शर्तें उनके सिक्खी जज़्बे और गुरु साहिबान के प्रति अथाह श्रद्धा व प्यार की सूचक हैं। उन्होंने दिल्ली पर राज्य करने की बजाय गुरु साहिबान की यादगारें कायम करने को प्राथमिकता दी। लगता है कि गुरुबाणी की ये पंक्तियां ऐसे गुरुसिक्खों के जीवन को ही दिखाती हैं जिन्होंने सांसारिक सुखों की जगह गुरु-चरणों की प्रीति को श्रेष्ठ जाना था :

राजु न चाहउ मुकति न चाहउ मनि प्रीति
चरन कमलारे ॥ (पन्ना ५३४)

शाह आलम द्वारा सरदार बघेल सिंघ की तरफ से रखी गई शर्तों को मान लेने के बाद

खालसा फौज किले से बाहर आ गई। नगर की सुरक्षा को भंग न करने और किला छोड़ जाने की हालत में शाह आलम सिक्खों को १० लाख रुपया नज़राना देने के लिए राजी हो गया। संधि की शर्तें तय हो जाने के बाद सरदार बघेल सिंघ ने अपनी तरफ से लखपत राय को मुगल दरबार में अपना दूत मुकर्रर कर दिया। सरदार जस्सा सिंघ रामगढ़िया यहां से जाता हुआ मुगलों की पांच तोपों, कई बंदूकों और उनकी ताजपोशी वाली रंग-बिरंगे पत्थर की एक सुंदर सिल अपने साथ ले गया। यह सिल छः फुट लंबी, चार फुट चौड़ी और नौ इंच मोटी थी। यह सुंदर सिल श्री अमृतसर साहिब के श्री दरबार साहिब परिसर में स्थित रामगढ़िया बुगे में अभी भी रखी हुई है।

मुगल बादशाह के साथ समझौता हो जाने के बाद सरदार बघेल सिंघ नगर के पुराने हिंदू, मुसलमान और चुनिंदा सिक्ख बुजुर्गों से मिले जो श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब के समय से ही दिल्ली में बस गए थे। उनसे पूछ कर उन्होंने उन स्थानों की खोज शुरू की जहां श्री गुरु नानक देव जी, श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब, श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब, श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी और माता सुंदरी जी आकर ठहरे थे और जहां श्री गुरु तेग बहादर साहिब को ११ नवंबर, १६७५ ई को शहीद किया गया था। पुराने ऐतिहासिक ग्रंथों के अनुसार सरदार बघेल सिंघ ने ऐसे सात स्थानों की निशानदेही की जहां अब गुरुद्वारा साहिब नानक पिआउ, गुरुद्वारा साहिब मजनूं का टिल्ला, गुरुद्वारा बंगला साहिब, गुरुद्वारा सीसगंज साहिब, गुरुद्वारा रकाबगंज साहिब, गुरुद्वारा साहिब मोती बाग और गुरुद्वारा साहिब माता सुंदरी जी स्थापित हैं। बाकी तीन गुरुद्वारे— गुरुद्वारा बाला साहिब, गुरुद्वारा दमदमा साहिब और गुरुद्वारा साहिब बाबा बंदा सिंघ बहादुर बाद में कायम

किए गए।

इन गुरुद्वारों को स्थापित करने के लिए सरदार बघेल सिंघ अप्रैल, १७८३ ई से लेकर नवंबर, १७८३ ई तक दिल्ली में ही ठहरे रहे। वे जानते थे कि अगर वे यह कार्य किए बगैर वापिस पंजाब चले गए तो मुगल बादशाह और स्थानीय अधिकारी फिर बेईमान हो जाएंगे और ये यादगारें कायम नहीं हो सकेंगी।

ऐतिहासिक गुरुद्वारों वाले ज्यादातर स्थानों पर मस्जिदें स्थापित हो चुकी थीं। स्थानीय मुसलमानों ने इनमें से दो स्थानों पर हिंसक झगड़े भी किए (गुरुद्वारा सीसगंज साहिब और गुरुद्वारा रकाबगंज साहिब), परंतु मुगल बादशाह के साथ हुए समझौते के कारण सिक्ख इन गुरुद्वारों को स्थापित करने में कामयाब हो गए। मुगल दरबार के एक कर्मचारी की सलाह पर जब गुरुद्वारा रकाबगंज साहिब वाली जगह पर बनी मस्जिद का फर्श उखाड़ा गया तो नीचे से पीतल की एक गागर मिली, जिसका मुंह ऊपर से बंद था और उसमें श्री गुरु तेग बहादर साहिब के धड़ की अस्थियों को संभाल कर रखा हुआ था।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब की शहादत वाली जगह खोजने में चांदनी चौक के एक भिश्ती परिवार ने सरदार बघेल सिंघ की बहुत मदद की थी। जिस बुढ़िया भिश्ती ने गुरुद्वारा सीसगंज साहिब वाली जगह का पता बताया था, उसके पिता ने खून से लथपथ हुआ वह चबूतरा धोया था, जिस पर बिठा कर श्री गुरु तेग बहादर साहिब को शहीद किया गया था। उस बुढ़िया भिश्ती ने बताया कि शहादत के समय श्री गुरु तेग बहादर साहिब का मुख पूरब की तरफ था और उनका शीश धड़ से अलग होकर आगे गिरा था। इस जगह पर भी गुरुद्वारा (सीसगंज साहिब) स्थापित करते समय रूढ़िवादी

मुसलमानों के साथ झगड़ा हो गया। दोनों तरफ से तेगें निकल आईं, परंतु बड़े वज़ीर के आ जाने से यह मसला हल हो गया। बाद में राजा सरूप सिंह और राजा रघबीर सिंह जींद वालों ने और जगह लेकर गुरुद्वारे की नई इमारत तामीर करवा दी।

दिल्ली में गुरु महाराज की यादगारें कायम करनी सरदार बघेल सिंह के जीवन की ऐसी महान प्राप्ति है जिस कारण पंथ में सदा उनका नाम उज्ज्वल रहेगा। भाई रतन सिंह (भंगू) 'प्राचीन पंथ प्रकाश' में लिखते हैं :

मद्घ दिल्ली लयो देहरो चिणाइ,
सतमों झंडो इम दीउ झुलाइ।
बजाइ नगारे कड़ाहु कराए,
सिक्ख परसंन चुतरफों आए।
सरदार बघेल सिंह इम गढ मारा,
रहगु प्रिथी उस नाम उजारा।
ऐसी करी उन गुर की कार,
पाऊ जगहा बहि गुर के द्वार ॥८७॥

शाह आलम के साथ हुई संधि के अनुसार जब तक सरदार बघेल सिंह दिल्ली में रहे सारे नगर का प्रबंध उनके अपने हाथ में था। उनके लिए सब्जी मंडी के नज़दीक सदर दरवाज़े के पास एक चबूतरा बनाया गया, जहां बैठ कर वे दिल्ली में आने वाले तिजारती माल की चुंगी वसूल किया करते थे। चुंगी से इकट्ठा होने वाले पैसे और स्थानीय संगत के सहयोग से गुरुद्वारों के निर्माण का काम पूरा किया गया। गुरुद्वारे कायम हो जाने के बाद इनमें एक-एक ग्रंथी नियुक्त किया गया और गुरुद्वारों की सेवा-संभाल तथा खर्चों को पूरा करने के लिए इनके साथ स्थायी रूप से जागीरें लगवा दी गईं।

चुंगी इकट्ठी करने के साथ-साथ सरदार बघेल सिंह के पास नगर के कोतवाल के अधिकार भी थे। शहर में खालसे का हुकम

चलता था। उस समय यह बात आम प्रचलित थी कि बादशाह का राज्य किले और शहर की भीतरी दीवारों तक सीमित है, मगर बाहर राज्य खालसे का चलता है। जिस जगह पर टिक कर सरदार बघेल सिंह ने दिल्ली के गुरुद्वारों का निर्माण करवाया था, समय के चक्र के साथ उनका वह रिहायशी स्थान लुप्त हो चुका है जिसकी खोज करनी चाहिए।

पंजाब लौटने से पहले सरदार बघेल सिंह आखिरी बार शाह आलम दूसरे को नवंबर, १७८३ ई में मिले। यह मिलन दो स्वतंत्र राजाओं के बीच था। इस सारी कार्यवाही में राम दयाल ने बहुत अहम भूमिका निभाई थी। दरबार से विदा होते समय शाह आलम ने सरदार बघेल सिंह को साज़ो-सामान के साथ लदा एक हाथी, पांच घोड़े, हीरे-जड़ित एक कीमती माला और बहुत-से कीमती तोहफे देकर पूरे शाही सम्मान के साथ भेजा।

सिक्खों के वापिस पंजाब लौटने के बाद शाह आलम ने फिर उनके विरुद्ध साजिश रचनी शुरू कर दी। उसने दिसंबर, १७८४ ई में मराठा सरदार माहद जी सिंधिया को वकीले-मुतल्लक बना कर उसे सिक्खों और रूहेलों को दबाने का काम सौंपा। इसी दौरान सिक्खों की एक बड़ी फौज सरदार बघेल सिंह, सरदार गुरदित्त सिंह और सरदार जस्सा सिंह रामगढ़िया की कमान तले गंगा-यमुना दुआब पर जा चढ़ी। वे बढ़ते-बढ़ते गंगा के इस पार अवध तक पहुंच गए। उनके इस हमले से अवध का नवाब और पूरबी प्रांतों में बैठे अंग्रेज चौकस हो गए। सिक्खों के संभावित हमले से डर कर उन्होंने गंगा के अगले पार मोर्चाबंदी कर ली, परंतु सिक्ख गंगा पार किए बिना ही कई नगरों को जीतते हुए वापिस पंजाब लौट गए।

शाह आलम के बदलते व्यवहार के कारण

जनवरी, १७८५ ई में एक बार फिर सरदार बघेल सिंघ ने दिल्ली पर हमला किया। उनके साथ सरदार गुरदित्त सिंघ और सरदार जस्सा सिंघ रामगढ़िया भी थे। इस बार मराठा सरदार अंबा जी मुगल बादशाह शाह आलम की मदद पर था। सरदार बघेल सिंघ ने उसकी सामूहिक फौज को हरा कर शाह आलम से भारी नज़राना वसूल किया। ३० मार्च, १७८५ ई को शाह आलम के साथ एक संधि पर दस्तखत किए गए, जिसके अनुसार उसने दस लाख रुपया सालाना सरदार बघेल सिंघ को देना मंजूर कर लिया। इस संधि पर दस्तखत करते समय सरदार बघेल सिंघ के साथ सरदार करम सिंघ, सरदार दुलचा सिंघ, सरदार भाग सिंघ, सरदार दीवान सिंघ और सरदार मोहर सिंघ आदि सिक्ख सरदार भी थे। कहा जाता है कि जब तक सरदार बघेल सिंघ ज़िंदा रहे, १० लाख की यह रकम नियमित रूप से उनको मिलती रही।

१७८७ ई के मध्य जब जाबता खान के पुत्र गुलाम कादिर सहेले ने दिल्ली पर हमला किया तो शाह आलम ने सिक्खों की मदद लेने के लिए सरदार बघेल सिंघ को कई चिट्ठियां लिखीं, परंतु सिक्खों को इस बात का एतराज़ था कि मुगल दरबार में रह रहे मराठे उनके विरुद्ध लड़े थे और उनको वह सम्मान नहीं दिया गया था, जिसके वे हकदार थे। सरदार बघेल सिंघ ने मुगल बादशाह की मदद करने से साफ इंकार कर दिया। गुलाम कादिर ने दिल्ली पर हमला करके लाल किले पर कब्ज़ा कर लिया। शाह आलम को बंदी बना कर उसके सामने लाया गया। गुलाम कादिर के हुक्म से १० अगस्त, १७८८ ई को शाह आलम को अंधा कर दिया गया।

सरदार बघेल सिंघ की उम्र बढ़ती जा रही थी। वे अपना ज्यादा समय अपनी

राजधानी छलौदी (करनाल), श्री अमृतसर साहिब और हरियाणा (ज़िला हुशियारपुर) में रह कर बिताने लगे। सिक्ख मिसलों में से भंगी और शुकरचक्किया मिसल के सरदारों ने अपनी गतिविधियां तेज़ कर दी थीं। सरदार बघेल सिंघ का एक बुजुर्ग नेता के रूप में सारे सिक्ख सरदार सम्मान करते थे और उनसे नेतृत्व लेते थे। १७९८ ई में जब जॉर्ज थॉमस ने जींद पर हमला किया तो सरदार बघेल सिंघ अपनी बड़ी उम्र के बावजूद भी जींद के राजा की मदद के लिए पहुंच गए। इसी तरह जब जॉर्ज थॉमस ने पटियाला को घेरा डाला तो रानी साहिब कौर की विनती पर सरदार बघेल सिंघ अपने साथी स. भाग सिंघ को साथ लेकर उनकी मदद के लिए आ गए। वे कभी भी बर्दाश्त नहीं कर सकते थे कि कोई अन्य ताकत सिक्ख रियासतों को दबा कर उन पर कब्ज़ा कर ले। उचित समय पर पहुंची मदद के कारण जॉर्ज थॉमस को पटियाला का घेरा तोड़ना पड़ा।

देहांत : सन् १८०० ई में सरदार बघेल सिंघ श्री अमृतसर साहिब और तरनतारन के गुरुद्वारा साहिब के दर्शन करने के लिए गये। सरदार बघेल सिंघ का देहांत १८०२ ई में हुआ। उनकी यादगार हरियाणा (ज़िला हुशियारपुर) में है। भाई कान्ह सिंघ नाभा उनका देहांत श्री अमृतसर साहिब में हुआ लिखते हैं। इस महान योद्धा की याद में देश की राजधानी दिल्ली में गुरुद्वारा बंगला साहिब में 'बाबा बघेल सिंघ अजायब घर' स्थापित है, जिसको देखने के लिए देश-विदेश से संगत आती है और उनके प्रति अपनी कृतज्ञता का प्रकटावा करती है।



दिल्ली फतह करने वाले महान् सिक्ख जरनैल सरदार बघेल सिंह करोड़ासिंधिया

-डॉ राजेंद्र सिंह 'साहिल'*

अठारहवीं शताब्दी के महान् सिक्ख सेनानायकों में सरदार बघेल सिंह करोड़ासिंधिया का नाम अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। आप वे आदर्श चरित्र वाले सिक्ख जरनैल हैं जिन्होंने दिल्ली फतह करके लाल किले पर 'निशान साहिब' फहराया और खालसा पंथ को अपूर्व गौरव प्रदान किया। यही नहीं, सरदार बघेल सिंह का सिक्का रुहेलखंड की पूर्वी सीमाओं और आगरा-इटावा तक चलता था। सिक्खों के प्रभाव को यमुना पार के इलाकों में ले जाने वाले सिपहसालारों में सरदार बघेल सिंह का नाम सबसे प्रमुख रहा है।

प्रारंभिक जीवन एवं करोड़ासिंधिया मिसल से संबंध : सिक्ख इतिहास और परंपरा में सरदार बघेल सिंह के प्रारंभिक जीवन के विषय में बहुत कम जानकारी मिलती है। भाई कान्ह सिंह नाभा कृत 'महान कोश' में मात्र यही उल्लेख मिलता है कि आप श्री अमृतसर साहिब ज़िले के झबाल गांव के रहने वाले थे।

सन् १७४८ ई में जब मिसलों की स्थापना हुई तो सरदार करोड़ा सिंह ने अपना एक अलग जत्था बनाया जो सरदार साहिब के नाम पर 'करोड़ासिंधिया मिसल' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। सरदार करोड़ा सिंह पहले करोड़ी मल सेठ थे। आपने नवाब कपूर सिंह से अमृत छका और सिंह सजकर सरदार करोड़ा सिंह बन गए। इस मिसल का वास्तविक प्रभाव जलंधर के दुआबा क्षेत्र में था। धीरे-धीरे इसके सूरमाओं ने

सतलुज पार के इलाकों में भी अपना दबदबा कायम कर लिया।

अहमद शाह अब्दाली के आक्रमणों के समय भी इस मिसल ने बड़ी बहादुरी के साथ संघर्ष किया और कई बार अब्दाली की फौज के दांत खट्टे किए। जत्थेदार मसतान सिंह और सरदार करम सिंह इस मिसल के श्रेष्ठ योद्धाओं में से थे।

सरदार बघेल सिंह सन् १७४८ ई में करोड़ासिंधिया मिसल में शामिल हुए। इस समय यह मिसल 'तरुणा दल' का अंग थी। 'तरुणा दल' यानी ३५-४० वर्ष से कम उम्र वाले सिंधों का दल। इस हिसाब से देखा जाए तो सरदार बघेल सिंह का जन्म संभवतः सन् १७२०-१७२५ के आस-पास ही हुआ होगा।

सरदार बघेल सिंह करोड़ासिंधिया (अपनी) मिसल के बेहद सक्रिय और दिलेर योद्धा थे। सन् १७६१ ई में जब सरदार करोड़ा सिंह अकाल चलाणा कर गए तब सरदार बघेल सिंह को मिसल का नया जत्थेदार नियुक्त किया गया।

सरदार बघेल सिंह की विजय-यात्राएं : जत्थेदार बनते ही सरदार बघेल सिंह ने अपनी मिसल की शक्ति बढ़ानी शुरू कर दी। बहुत जल्दी ही जत्थे की गिनती तीस हजार सिंधों तक जा पहुंची। सरदार साहिब के नेतृत्व में जत्थे ने सतलुज पार करके पूर्व की ओर मुहिमें आरंभ कीं। धीरे-धीरे पूर्वी इलाकों में मिसल की शक्ति

*१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लापुर दाखा (लुधियाना), पंजाब-१४११०१, फोन : ९४१७२-७६२७१

बढ़ती गई।

सन् १७६४ ई. जब सिक्खों ने सरहिंद को फतह किया तब करनाल के उत्तरी इलाके छलौदी, जमीतगढ़, खुरदीन और किनोड़ी के कसबे करोड़ासिंधिया मिसल के कब्जे में आ गए।

फरवरी, सन् १७६४ ई. में सरदार जस्सा सिंह आहलूवालिया और सरदार बघेल सिंह के नेतृत्व में सिक्ख जत्थों ने यमुना पार के इलाकों पर धावा बोला और एक बड़े क्षेत्र को अपने अधिकार में ले लिया। इन्हीं दिनों रूहेला नवाब नजीबुद्दौला के विरुद्ध सिक्खों ने राजा जवाहर मल की मदद की।

यह वह समय था जब अहमद शाह अब्दाली सिक्खों के छापामार युद्ध से बेहद परेशान था। मई, १७६७ ई. में जब सरदार बघेल सिंह के नेतृत्व में सिक्खों ने यमुना पार करके रूहेलखंड के नवाब नजीबुद्दौला पर हमला किया तो अब्दाली ने अपने एक सिपहसालार ज़हान खां को नजीब की मदद करने के लिए भेजा। शामली और कैराना में सिक्खों और ज़हान खां के लश्कर में घमासान युद्ध हुआ। सिक्खों ने अफगानों के बुरी तरह से दांत खट्टे किए और निकल गए।

सन् १७७३ ई. में सिक्खों ने सरदार करम सिंह और सरदार बघेल सिंह के नेतृत्व में जलालाबाद को फतह किया।

सन् १७७५ ई. सरदार राए सिंह भंगी, सरदार तारा सिंह घेबा और सरदार बघेल सिंह के नेतृत्व में सिक्खों ने एक बार फिर यमुना पार की और लखनौती, गंगोह, देवबंद, ननौता तथा गौसगढ़ आदि शहरों पर कब्ज़ा कर लिया। यहां के हाकिम ज़ाबता खां ने पचास हज़ार का नज़राना देकर सिक्खों से सुलह की। सरदार

बघेल सिंह ने ज़ाबता खां को अमृत छकाया और उसका नाम धरम सिंह रख दिया। यहां तक कि उसका बेटा गुलाम कादिर भी सिंह सजा और पिआरा सिंह बन गया। इस घटना के बाद रूहेले सिक्खों के मित्र बन गए।

सन् १७७६ ई. में रूहेलों द्वारा मदद की प्रार्थना करने पर सिक्खों ने सहारनपुर के फौजदार अबुल कासिम, जो मुगल बादशाह के वज़ीर अब्दुल अहद का भाई था, पर धावा बोला। मुजफ्फरनगर के निकट अमीर नगर में भयानक जंग हुई, जिसमें अबुल कासिम मारा गया।

सन् १७७९ ई. में पटियाला के राजा अमर सिंह ने सरदार बघेल सिंह के कुछ इलाकों पर कब्ज़ा कर लिया तो सरदार साहिब ने अमर सिंह को शोधने के लिए पटियाला पर हमला कर दिया। स्थिति बिगड़ती देख राजा अमर सिंह ने संधि कर ली और अपने पुत्र साहिब सिंह को सरदार बघेल सिंह के पास भेजकर अमृत छकवाया।

इस प्रकार सरदार बघेल सिंह के नेतृत्व में सिक्खों ने गंगा-यमुना दुआब से लेकर रूहेलखंड में पीलीभीत तक और दक्षिण-पूर्व में अलीगढ़, खुर्जा, चंदौसी, आगरा, इटावा तक अपना कब्ज़ा जमाया।

इन दिनों सरदार बघेल सिंह का इतना प्रभाव था कि पंजाब और दिल्ली के मध्य आवागमन के लिए सरदार साहिब से आज्ञा लेनी पड़ती थी।

दिल्ली-फतह की दास्तान : सरदार बघेल सिंह करोड़ासिंधिया की अनेक विजयों में सबसे महत्वपूर्ण है— दिल्ली विजय। मार्च, सन् १७८३ ई. में सरदार साहिब ने अन्य सिक्ख सेनानायकों और जत्थों को लेकर दिल्ली पर आक्रमण किया और

उसे कुछ ही समय में फतह करके लाल किले पर खालसे का निशान साहिब फहरा दिया। मुगल बादशाह शाह आलम द्वितीय ने अपने वजीर आजम गौहर को सिक्खों के साथ संधि करने के लिए भेजा। संधि की शर्तें तय हुई कि खालसे को तीन लाख रुपए जुर्माना अदा किया जाए, शहर के दीवानी हक सरदार बघेल सिंघ को दे दिए जाएं और जब तक दिल्ली में सभी ऐतिहासिक गुरुद्वारा साहिबान की स्थापना न हो जाए, तब तक सरदार साहिब चार हजार सिक्खों के जत्थे के साथ दिल्ली में ही रहें। दिल्ली में ऐतिहासिक गुरुद्वारा साहिबान का निर्माण : सरदार बघेल सिंघ अत्यंत समर्पित गुरसिक्ख थे। दिल्ली में ऐतिहासिक गुरु-स्थानों को स्थापित करने के लिए आपने अथक प्रयास एवं परिश्रम किया।

गुरुद्वारा बंगला साहिब : मुगल बादशाह से संधि होने के बाद तुरंत ही सरदार साहिब ने दिल्ली में सिक्ख इतिहास से संबंधित महत्त्वपूर्ण स्थानों की खोज शुरू कर दी। सबसे पहले माता सुंदरी जी और माता साहिब कौर जी के दिल्ली-प्रवास के स्थान पर गुरुद्वारा साहिब का निर्माण आरंभ करवाया गया। इसके साथ ही अष्टम पातशाह साहिब श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब के ज्योति-जोत समाने के स्थान पर भव्य गुरुद्वारा साहिब तामीर करवाया गया। आज यह गुरुधाम गुरुद्वारा बंगला साहिब के नाम से प्रसिद्ध है।

गुरुद्वारा रकाबगंज साहिब : सरदार बघेल सिंघ ने दिल्ली में वह स्थान भी खोज निकाला, जहां शहीदी के बाद नवम् पातशाह श्री गुरु तेग बहादुर साहिब के शीश रहित पावन शरीर का दाह-संस्कार किया गया था। दरअसल एक सिक्ख भाई लक्खी शाह ने गुरु जी की शीश विहीन पावन देह को अपने घर में रखकर, घर

को ही आग लगाकर दाह संस्कार को सम्पन्न किया था।

सरदार साहिब ने इस पवित्र स्थान पर गुरुद्वारा साहिब का निर्माण आरंभ करवाया। यह गुरुधाम गुरुद्वारा रकाबगंज साहिब के नाम से विख्यात हुआ।

गुरुद्वारा सीसगंज साहिब : सबसे कठिन कार्य उस स्थान की तलाश थी जहां नवम् पातशाह को शहीद किया गया था। सरदार बघेल सिंघ ने प्रयास निरंतर जारी रखे। बड़ी कोशिशों के बाद उस मशक वाले की बेटा मिल गई, जिस मशक वाले ने शहादत के बाद गुरु जी के पावन शरीर को स्नान करवाया था। मशक वाले की बेटा अब बेहद बूढ़ी हो चुकी थी। उस वृद्धा ने गुरु जी की शहादत वाले स्थान की पहचान करके निशानदेही की। वह स्थान किसी और के कब्जे में था। एक छोटी-सी सैनिक मुठभेड़ के बाद सरदार साहिब ने उस स्थान को अपने अधिकार में ले लिया और वहां एक चबूतरा बनवाकर गुरुद्वारा साहिब के निर्माण की प्रक्रिया आरंभ कर दी। यह गुरुधाम आज गुरुद्वारा सीसगंज साहिब के नाम से विश्व-विख्यात है। बाद में जींद रियासत के शासक राजा सरूप सिंघ ने सन् १८६० ई के आस-पास गुरुद्वारा सीसगंज साहिब की वर्तमान इमारत तामीर करवाई।

स्वाभिमानि योद्धा : सरदार बघेल सिंघ करोड़सिंधिया अत्यंत स्वाभिमानि योद्धा थे। सरदार साहिब जब दिल्ली से वापिस आने लगे तब मुगल बादशाह शाह आलम ने उनसे मिलने की इच्छा प्रकट की। स्वाभिमानि सरदार साहिब ने बादशाह के हजूर में पेश होने से इंकार कर दिया। मुगल बादशाह ने कहा, वे जैसे आना चाहते हैं वैसे आयें। इस पर सरदार

बघेल सिंघ बड़ी शान के साथ हाथी पर सवार होकर अपने जत्थे के साथ बादशाह से मिलने लाल किले पहुंचे। सरदार साहिब ने दरबार में पहुंच कर जयकारा छोड़ा और गरज कर फतहि बुलाई। बादशाह ने भी अपने सभी लोगों को उसी प्रकार फतहि का उत्तर फतहि के साथ देने को कहा। सरदार साहिब को बादशाह के समकक्ष ही आसन प्रदान किया गया। रुखसत के वक्त मुगल बादशाह ने सरदार बघेल सिंघ को एक हाथी, सोने की जंजीर, पांच घोड़े और बहुत-से तोहफे देकर विदा किया।

इस मुलाकात में बादशाह ने काफी देर तक सरदार साहिब के साथ विचार-विमर्श किया। बादशाह सरदार साहिब के विचारों से बहुत प्रभावित हुआ। उसने कहा कि सिक्ख आदर्श चरित्र वाले श्रेष्ठ लोग हैं।

आदर्श चरित्र : सरदार बघेल सिंघ अत्यंत आदर्श चरित्र वाले गुरसिक्ख थे। आप मजलूम की रक्षा करने के लिए हमेशा तत्पर रहते थे। उदाहरण के तौर पर एक घटना उल्लेखनीय है। सन् १७७३ ई में सरदार साहिब को सूचना मिली कि जलालाबाद के हाकिम मुहम्मद खान ने एक ब्राह्मण की कन्या को जबरदस्ती अगवा कर लिया है। खबर मिलते ही सरदार साहिब ने एक हजार किलोमीटर दूरी की परवाह न की। जत्था लेकर तुरंत जलालाबाद पहुंचे और मुहम्मद खान को दंडित किया। कन्या को सम्मान सहित उसके घर पहुंचाया।

अंतिम समय तक सिक्खों का नेतृत्व एवं सहयोग : दिल्ली-फतह के बाद भी अगले बीस वर्षों तक सरदार बघेल सिंघ करोड़सिंधिया सिक्खों का कुशलतापूर्वक नेतृत्व करते रहे। जिस सिक्ख सरदार को जब भी आपकी सहायता की आवश्यकता पड़ी या जिसे भी आपने किसी

संकट में घिरा पाया आप तुरंत मदद के लिए उसके पास पहुंचे।

सन् १७८० ई में जब दिल्ली के वजीर अब्दुल्ला खान ने शहजादे फरजंद को पटियाला के राजा अमर सिंघ के ऊपर हमला करने भेजा तो सरदार साहिब ने उसी समय जत्थे के साथ पटियाला पहुंचकर राजा अमर सिंघ की मदद की और शहजादा फरजंद को परास्त किया।

इसी तरह १७८८ ई में जब मराठा मनराव ने पंजाब की ओर नज़र उठाई तो सरदार बघेल सिंघ ने उसके लश्कर को घेर कर हार स्वीकार करने पर मजबूर कर दिया।

सन् १७९८ ई में अंग्रेज जनरल जार्ज थॉमस ने जब जींद रियासत पर आक्रमण किया तो सरदार साहिब तुरंत सहायता के लिए जींद जा पहुंचे।

अकाल चलाणा : सिक्खों को अपना श्रेष्ठ एवं आदर्श नेतृत्व प्रदान करते हुए महान् जरनैल सरदार बघेल सिंघ करोड़सिंधिया सन् १८०२ में अकाल चलाणा कर गए।

सरदार साहिब द्वारा ११ मार्च, सन् १७८३ ई वाले दिन दिल्ली फतह करने की घटना सिक्ख इतिहास में सुनहरे अक्षरों में दर्ज है।



गदरी बाबा स. जगत सिंह सुरसिंघ

-डॉ. अमरजीत कौर*

अविभाज्य पंजाब के लाहौर ज़िले का गांव सुरसिंघ (वर्तमान में भारत के राज्य पंजाब के ज़िला तरनतारन में) विद्रोही बाबाओं की राजधानी के नाम से जाना जाता है। यह गांव आर्य काल से लेकर अब तक बहादुरी में अपनी मिसाल आप है। इस गांव के इतिहास के विशाल समुद्र में से हम केवल गदरी बाबा स. जगत सिंह की बात करेंगे।

स. जगत सिंह का जन्म भाई अरूड़ सिंह (ढिल्लों) के घर १८९० ई में गांव सुरसिंघ में हुआ। प्रारंभिक (गुरुमुखी की) शिक्षा गांव के गुरुद्वारा साहिब में बाबा बिधी चंद जी की संप्रदाय के प्रमुख बाबा भाग सिंह से प्राप्त की। आप कृषि का कार्य करते थे।

गदर लहर की बात करने से पहले इसकी पृष्ठभूमि की तरफ नज़र मारनी अप्रासंगिक नहीं होगी। हर कार्य का कोई कारण होता है। कारण जानने के लिए पंजाब की आर्थिक हालत का जायज़ा संक्षिप्त रूप में लेना जरूरी है।

यह वह समय था जब पंजाब पर अंग्रेजों का पूर्ण राज्य कायम हो गया था। अंग्रेजों ने हिंदोस्तान की उपजाऊ धरती, कुदरती दौलत के अनंत खजाने भारतीय लोगों के फायदे और खुशहाली के लिए नहीं इस्तेमाल किए, बल्कि इंग्लिशतान की जागीरदारी को तरक्की देने के लिए इस्तेमाल किया। सिक्ख राज्य के खत्म हो जाने के बाद पंजाब की जनता कंगाली की तरफ धकेली जाने लगी। शहरों और कसबों की देसी दस्तकारी वीरान कर दी। यहां की पैदावर और दस्तकारी विलायत तथा अन्य देशों में

बेचनी शुरू कर दी। मसलन १९१३ ई में ९० लाख पौंड कपास बर्तानिया ले जाई गई। १९१४ ई में ९६३० और फिर इसी साल आठ लाख पौंड से अधिक कपास, पटसन, अनाज ढोया गया। अन्य व्यापारिक आवाजाही, जहाजों के किराए, बैंक फीसों आदि के साथ हर साल करोड़ों रुपया बाहर जाता रहा।

१८५० ई से अंग्रेजों द्वारा मचायी लूट ने देश को कंगाली की कगार पर खड़ा कर दिया। गांवों और शहरों में दरार पड़ गई। गांवों की ज़मीनें शहर के बनियों के हाथों में आने लगीं। अति गरीबी का दौर आ गया।

गरीबी में रोज़ी-रोटी के लिए धक्के खाते यहां के बाशिंदों ने विदेश की तरफ मुंह कर लिया, क्योंकि वहां दिहाड़ी अच्छी बन जाती थी। इसी कड़ी में वर्णनयोग्य है कि गांव सुरसिंघ का भाई बखशीश सिंह (ढिल्लों) पहला भारतीय था, जिसने विदेश की धरती पर १८९६ ई में पैर रखा था।

र. क. दास की बर्लिन से छपी पुस्तक 'शांत सागर के पश्चिमी किनारे के हिंदोस्तानी' बताती है कि सबसे पहला हिंदी, जो पश्चिमी किनारे पर उतरा था, वह भाई बखशीश सिंह, गांव सुरसिंघ, ज़िला लाहौर (अब ज़िला तरनतारन) का था। १९०० ई तक यह दो बार गांव आकर आदमी ले गया। फिर आया और १९०४ ई में अपनी पत्नी भी साथ ले गया। इस तरह आस-पास के गांवों के और पंजाब से लोग विदेश जाने शुरू हो गए। विदेश में जंगल काट कर लाइनें बिछाने का काम था, जो भारतीयों ने तनदेही के साथ किया। १९११

*गांव-डाक : इब्बण कलां, ज़िला : श्री अमृतसर साहिब, फोन : ९७८०६-३५१९७

ई तक हज़ारों भारतीय विदेश पहुंच चुके थे। गांव सुरसिंह से स. जगत सिंह और भाई प्रेम सिंह रोजी-रोटी की खातिर भाई बखशीश सिंह के साथ विदेश चले गए। इस समय तक पंजाबियों ने स्थानीय गुरुद्वारा साहिब भी बना लिया था।

गुरुद्वारा साहिब के अंदर मीटिंगों का सिलसिला चलता रहता था। आपस में देशवासियों की गुलामी के बारे में बातें होती थीं। स. जगत सिंह आदि ने अपने पिता-दादा से महाराजा रणजीत सिंह के राज्य के समय पंजाब के ज़मींदारों के उच्च जीवन-स्तर के बारे में सुना था और जो अंग्रेज़ी राज्य के समय देश की हालत थी, वह आंखों के सामने थी। विदेश में उस समय लोगों के काम करने की तीन बड़ी बस्तियां थीं— पहली कैलिफोर्निया की रियासत में सानफ्रांसिस्को, दूसरी औरेगन और वाशिंगटन के मध्य औरेगन सेंट जान, पोर्ट लैंड, सिआटल अस्टोरिया और तीसरा ब्रिटिश कोलंबिया, वेनकूवर का इलाका, जहां डेरों में लोग रहते थे।

श्री जी. डी. कुमार, रास बिहारी बोस और लाला हरदयाल के यत्नों से गदर पार्टी का जन्म हुआ। भाई हरनाम सिंह टुंडीलाट, बाबा विसाखा सिंह ददेहर साहिब, बाबा गुरदित्त सिंह कामागाटामारू, भाई ऊधम सिंह कसेल, भाई केसर सिंह ठट्टगढ़, स. करतार सिंह सराभा तथा अन्य सभी हिंदियों ने तय किया कि यह संघर्ष 'गदर' के नाम पर हथियारबंद होगा। उस समय 'गदर आश्रम' और 'गदर गुंज' पत्रिका प्रकाशित करनी भी शुरू की और फैसला किया गया कि अलग-अलग जहाजों के द्वारा देश पहुंचा जाए और अपने लोगों को साथ लेकर अंग्रेजों के विरुद्ध जंग लड़ी जाए। इस समय तक बंगला की आर्थिकता को खोरा लगने के कारण बहुत-से बंगाली भी विदेश पहुंच चुके थे। दूसरी तरफ अंग्रेज भी भारतीयों की गतिविधियों से पूरी तरह से सचेत थे।

स. जगत सिंह १९१४ ई में देश को आजाद कराने के लिए संघर्ष करने हेतु चुनिंदा आदमियों की हैसियत से तोशामारू जहाज़ के द्वारा भारत आ गए।

स. जगत सिंह के घर की गई मीटिंग में २३ नंबर रसाले के फौजी भी पहुंचे हुए थे, मगर इसकी सूचना अंग्रेजों के पिटू कपूर सिंह पद्धरी को लग गई। उसने झटपट डी. सी. श्री अमृतसर साहिब को जा बताया। डी. सी. ने बड़ी गार्द गश्त पर लगा दी। सभी गदरी बच गए। उन्होंने अगली मीटिंग झाड़ साहिब (तहसील पट्टी) की बजाय कैरों के थेह पर जाकर की।

इस दौरान कई बार स. जगत सिंह को पार्टी-फंड के लिए साथियों समेत डाके भी मारने पड़े, कई बार मुखबिरों को सोधा भी लगाना पड़ा, बम भी बनाने पड़े। लाहौर के चौबारे में बम बनाते समय स. हरनाम सिंह को अपना हाथ भी गंवाना पड़ा और वह 'टुंडीलाट' के नाम से संबोधित किया जाने लगा।

जिस मकसद के लिए गदरियों ने जेहाद छेड़ा था, वास्तव में उस समय कंगाली के साथ जूझ रही ग्रामीण जनता और अंग्रेज-भक्त बन रहे अन्य अमीर शहरियों ने साथ न दिया। कुछ अपने मुखबिर ही मार गए।

२ फरवरी, १९१५ ई की रात चब्बा गांव में मारा डाका पार्टी का सारा काम बिगाड़ने का कारण बना। डाके में पकड़े गए काला सिंह ने पुलिस को बता दिया कि डाका बाहर से आए गदरियों ने मारा है। श्री अमृतसर साहिब के डी. सी. ने सी. आई. डी. सुप्रिटेण्डेंट लियाकत अली से कहा कि वे आदमी पकड़ कर लाओ, जो पार्टी का भेद बता सकें। उसने मादो के बराड़ के जैलदार बेला सिंह के साथ सांठ-गांठ की। उसने अपने गांव के किरपाल सिंह को गांठ लिया, जो गदरियों के साथ देश आया था। किरपाल सिंह मूला सिंह मीरांकोटिया के माध्यम

से पार्टी में जा घुसा। पकड़ने-पकड़ाने का सिलसिला शुरू हो गया।

स. जगत सिंह सुरसिंह, स. करतार सिंह सराभा, स. हरनाम सिंह टुंडीलाट ने सलाह की कि सरहद के आज़ाद इलाके में निकल जाएं। जब काम ठंडा होगा वे फिर आकर अपना काम शुरू कर देंगे। तीनों ही लायलपुर चले गए। वहां से स. हरचंद सिंह सुरसिंह से सौ रुपये लेकर अफगानिस्तान की सरहद के निकट मिचनी पहुंच गए। इन तीनों ने अखबार में पढ़ा कि काबुल की सरकार ने अंग्रेज़ सरकार के कहने पर लाहौर से गए तीन मुसलमान विद्यार्थियों को गिरफ्तार कर लिया है। इन्होंने सोचा कि अगर काबुल सरकार विद्यार्थियों के साथ ऐसा सलूक कर सकती है तो अंग्रेज़ राज के बागियों को कैसे पनाह देगी। ये वहां से पीछे मुड़ गए। वहां से २ मार्च को सरगोधा की बार चक्क नंबर ५ में रजिंदर सिंह पेन्शनरी के डेरे पर आ गए। इसने स. जगत सिंह को बंदूकें देने का वायदा किया हुआ था। उसने झटपट चौकी इंचार्ज गंडा सिंह रसालदार को बता दिया। गंडा सिंह गंडीविंड (ज़िला तरनतारन) गद्दार था। वह डी. सी. को खबर देकर बड़ी फोर्स लेकर आ धमका। जब गंडा सिंह आया, उस समय मकान के अहाते में खाट पर तीनों ही बैठे थे। स. करतार सिंह सराभा जेब में से 'गदर की गूंज' पत्रिका निकाल कर पास बैठे लोगों को पढ़ कर सुना रहा था कि गंडीविंडीए गद्दार ने तीनों को गिरफ्तार कर लिया।

इस समय तक बहुत-से गदरी पकड़े जा चुके थे। पहले लाहौर साज़िश केस में ८२ आदमियों पर १५ अप्रैल, १९१५ ई को मुकद्दमा चला दिया गया। ८२ गदरियों में से २४ को मौत की सज़ा दी गई। १५ नवंबर, १९१५ ई वाले दिन स. जगत सिंह सुरसिंह, स. करतार सिंह सराभा, स. हरनाम सिंह सिआलकोट, भाई

बखशीश सिंह और भाई सुरैण सिंह गिलवाली, श्री विष्णु गणेश पिंगले भाई सुराइन सिंह गिलवाली सात गदरियों को इकट्ठा फांसी दी गई।

स. जगत सिंह के बारे में Struggle For Free Hindustan, Gadar directory edited by Bhai Nahar Singh M.A., Bhai Kirpal Singh (Baba Virsa Singh Gobind Sadan, Godaipur Mehrauli, New Delhi, 1996) में इंदराज इस प्रकार है :-

(147.449) Jagat Singh alias Jai Singh son of Arur Singh Jat of Sur Singh, Police Station Khalsa, Lahore, reported by the Canadian authorities to be sedition and believed to have murdered Harnam Singh, a loyalist in Vencooover took part in dacoities in Ludhiana and Amritsar two of which were attended with murder, helped in the manufacture of bombs endeavoured to seduce at sargodha, was convicted by the Lahore Tribunal sentenced to death and forfeiture of property. He has been hanged.

स. जगत सिंह सुरसिंह की फांसी जगज़ाहिर है। इस परिवार की जायदाद ज़ब्त कर ली गई थी। अब इस परिवार को यह नहीं पता कि कौन-सी ज़मीन या घर की कौन-सी जायदाद ज़ब्त की गई थी। इसी गांव के भाई प्रेम सिंह को १६ मई, १९१६ ई को फांसी देकर शहीद कर दिया था। इस गदरी परिवार के डॉक्टर परमिंदर सिंह (पक्का बाज़ार) ने बताया कि एडवोकेट मलकीअत सिंह (वडैच) ने बहुत कोशिश की थी, परंतु सरकार 'ब्लड रिलेशन' पूछती है। सोचने की बात है कि जो चढ़ती जवानी में आज़ादी की चिंगारी लेकर फांसी के तख्ते पर चढ़ा गए, क्या उनके भाई, भतीजे, परिवार कोई अर्थ नहीं रखते, जो अब तक कुर्कियों के मारे गरीबी झेल रहे हैं। ☀

सो किउ मंदा आखीए . . .

-डॉ. रुपिंदर कौर*

भारत पुरानी सभ्यता वाला देश है। इसको पहली सभ्यता का जन्म-दाता होने का सम्मान प्राप्त है। सिंधु घाटी की सभ्यता से लेकर वैदिक, उत्तर वैदिक और इसके बाद अब तक का मानव-सभ्यता का सफर लंबा सफर है। यदि देखा जाए तो मूलभूत वैदिक काल के बाद भारत में स्त्री की स्थिति संतुष्टिजनक नहीं रही। वह समय-समय पर हीनता का संताप ढोती हुई तिरस्कार को ही अपनी होनी मान कर सब्र करती आई है। सदियों से पुरुष-प्रधान समाज ने स्त्री को निम्न दर्जा देकर अपनी अल्प बुद्धि और तंगदिली का सबूत दिया है। घर-परिवार और समाज को अपनी कलात्मक रुचियों तथा सुंदर व्यवहार के साथ, ममतामयी भावनाओं के साथ सुंदर, सभ्य और रहनेयोग्य बनाने वाली स्त्री खुद दिन-ब-दिन बद से बदतर हालात में जा रही है।

आदि काल से लेकर अब तक के बने सामाजिक जीवन-मूल्य, भौतिक और वैज्ञानिक तरक्की स्त्री वर्ग के विरोध में ही रही है। स्त्री से संबंधित कई सामाजिक कुरीतियां प्रचलित रही हैं, जैसे पर्दा-प्रथा, बाल-विवाह, बहु-विवाह, सती-प्रथा, दहेज-प्रथा, कन्या-भ्रूण-हत्या आदि। आज इक्कीसवीं सदी की वैज्ञानिक खोजों में स्त्री का अस्तित्व खतरे की तरफ अधिक रहा है। सदियों से अपनी काबिलियत का सबूत देने के बावजूद भी हालात समय-समय पर स्त्री के

विरोध में ही खड़े दिखाई देते हैं।

सिक्ख गुरु साहिबान ने स्त्री की दैवीय शक्तियों का मान-सम्मान करते हुए उसके लिए समानता, स्वतंत्रता और सम्मान के भाव प्रकट किए हैं। गुरमति में स्त्री को उच्च व आदर्श स्थान प्राप्त है। जिस समाज में स्त्री के लिए अनेक बंदिशें और दुर्भावनायें जुड़ी हुई थीं, उस समाज में स्त्री के हक में आवाज़ उठाते हुए श्री गुरु नानक देव जी ने फरमाया :

भंडि जंमीए भंडि निंमीए भंडि मंगणु वीआहु ॥
भंडहु होवै दोसती भंडहु चलै राहु ॥
भंडु मुआ भंडु भालीए भंडि होवै बंधानु ॥
सो किउ मंदा आखीए जितु जंमहि राजान ॥

(पन्ना ४७३)

श्री गुरु नानक देव जी के समय जब हालात इस प्रकार के बन चुके थे कि जो व्यक्ति बढ़-चढ़ कर स्त्री की निंदा करे वही गुणी-ज्ञानी और विद्वान माना जाता था। ऐसे हालात में समय के विपरीत बात कहनी बहुत हिम्मत, दिलेरी और क्रांतिकारी कदम उठाने के बराबर थी। गुरु साहिब ने स्त्री के प्रति समाज का नज़रिया बदलने के लिए उपरोक्त वचन उच्चारण किए, बड़े विवेकपूर्ण ढंग के साथ और व्यवहारिक पृष्ठभूमि के आधार पर बड़ी तर्कपूर्ण दलीलों के साथ। गुरु साहिब की तर्क भरपूर दलीलें ही थीं कि लोग इस सच्चाई को झुठला न सके कि स्त्री जगत-जननी है, अति उत्तम है। इसके बिना मानव का गुज़ारा

*पोस्ट-ग्रेजुएट पंजाबी विभाग, गुरु तेग बहादर खालसा कॉलेज, दसूहा, ज़िला हुशियारपुर-१४४२०५

नहीं। गुरु साहिब ने घर-गृहस्थी की निंदा करने वालों से कहा कि जिस स्त्री के बिना सामाजिक विकास की निरंतरता के सामने प्रश्न-चिन्ह लग जाना यकीनी है आप उसे बुरी क्यों कहते हो? प्रचलित धारणाओं से लोहा लेना और हालात से विपरीत दिशा की बात करनी किसी आम इंसान के लिए आसान बात नहीं होती। प्रचलित धारणाओं को तोड़ने के लिए बड़े ऊंचे तर्क का होना ज़रूरी है, जिसकी पूरी सामर्थ्य गुरु साहिबान तथा अन्य बाणीकारों ने दिखाई है। उन्होंने सख्त शब्दों में स्त्री के विरोध में खड़ी उन सब रिवायतों का खंडन किया है, जो स्त्री की स्वतंत्रता, समानता और स्वाभिमान के विरुद्ध थीं।

समूची स्त्री जाति के लिए यह बड़े फख्र वाली बात है कि गुरु साहिबान ने अपने महान फलसफे की पेशकारी के लिए और ब्रह्म-ज्ञान का प्रकटावा करने के लिए स्त्री स्वरूप (भूमिका) को माध्यम बनाया है। उनकी नज़रों में स्त्री इतनी महान है कि वह अपनी अनुभूतियों को पेश करने के लिए अपने आप को स्त्री स्वरूप में और परमात्मा को पति रूप में बयान करते हैं :

आवहु सजणा हउ देखा दरसनु तेरा राम ॥
घरि आपनइ खड़ी तका मै मनि चाउ घनेरा
राम ॥ (पन्ना ७६४)

बाणी के प्रकटावे के लिए अपनाई संबोधनी युक्तियों में भी स्त्री-संबोधनी सुर प्रधान है। गुरु साहिब ने आदर्श समाज की सृजना करने के लिए आदर्श नारी का स्वरूप भी बाणी में बयान किया है, जो गुणवान, सतवंती, सभ्य व्यवहार की धारक, सद्गुणी, सहनशील, समर्पण-भावना रखने वाली और बच्चों के प्रति त्याग व सेवा का भाव रखने वाली हो। ऐसी स्त्री

अच्छे परिवार की सृजना करती है। इसी तरह अच्छे परिवारों से अच्छे समाज का निर्माण होता है।

आज के युग में चाहे स्त्री की स्वतंत्रता और शक्तीकरण के लिए कई कानून, संस्थाएं और अधिकार आरक्षित रखे गए हैं, फिर भी आधुनिक वैज्ञानिक दौर ने स्त्री को मंडी की वस्तु बना दिया गया है। आर्थिक पक्ष से सुरक्षित हो रही स्त्री आज सामाजिक पक्ष से असुरक्षित हो गई है। नारों और इशितहारबाज़ी के इस युग ने स्त्री को सम्मान की बजाय अपमान दिया है। यदि स्त्री की समाज में सम्मानजनक स्थिति सृजित करनी है तो हमें गुरु साहिबान द्वारा स्त्री के प्रति दिए माननीय सिद्धांतों और मापदंड को अपनाना पड़ेगा। ☀



खबरनामा

शिरोमणि गु. प्र. कमेटी धर्म प्रचार लहर को नई दिशा देगी : भाई लौगोवाल

रमदास : २९ जनवरी : छठे पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब और बाबा बुड्ढा जी के चरण-स्पर्श प्राप्त ऐतिहासिक कसबा रमदास में पहुंचे शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान भाई गोबिंद सिंह लौगोवाल ने गुरुद्वारा समाध बाबा बुड्ढा जी में एक समागम को संबोधित करते हुए कहा कि शिरोमणि गु. प्र. कमेटी वर्तमान समय में सिक्ख कौम को पेश हर चुनौती का डट कर मुकाबला करते हुए धर्म प्रचार लहर को नई दिशा देगी। उन्होंने कहा कि शिरोमणि गु. प्र. कमेटी सिक्खों की सिरमौर धार्मिक जत्येबंदी है, परंतु दुख की बात है कि कुछ लोग इसकी महान सेवाओं को नज़र-अंदाज़ करते हुए इसकी नुक्ताचीनी करते रहते हैं। उन्होंने कहा कि अपनी निजी लालसाओं की खातिर विरोध करने वालों को दरकिनार करते हुए शिरोमणि गु. प्र. कमेटी सिक्खी की चढ़दी कला के लिए कार्य करती रही है और करती रहेगी। उन्होंने यह भी कहा कि संजीदा और रचनात्मक सुझावों का हम हमेशा स्वागत करेंगे, परंतु अपनी तथाकथित मशहूरी के लिए अनावश्यक नुक्ताचीनी जायज़ नहीं। इससे पहले सीनियर अकाली नेता डॉ. रतन सिंह अजनाला और स. अमरपाल सिंह बोनी अजनाला ने जहां शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के प्रधान भाई लौगोवाल का स्वागत किया वहीं शिरोमणि गु. प्र. कमेटी की तरफ से धर्म प्रचार, शैक्षणिक, स्वास्थ्य और लोक-भलाई के क्षेत्र में निभाई जा रही सेवाओं की प्रशंसा की। डॉ. रतन सिंह अजनाला ने सरहदी कसबा रमदास में शिरोमणि गु. प्र. कमेटी की तरफ से लड़कियों का कॉलेज खोलने की मांग की, जिस पर भाई लौगोवाल ने विचार करने का भरोसा दिया।

लंगर पर जी. एस. टी. संबंधी केंद्रीय वित्त मंत्री का बयान गुमराहकुन

श्री अमृतसर साहिब : ३ फरवरी : शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने केंद्रीय वित्त मंत्री श्री अरुण जेतली

इसी दौरान स्थानीय गुरुद्वारा समाध बाबा बुड्ढा जी से संबंधित गुरुद्वारा बाबा किशन कंवर तालाब में गुरुद्वारा साहिब की नयी तैयार की गई इमारत में श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पवित्र स्वरूप सुशोभित किए गए। इसी दौरान शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के प्रधान ने गुरुद्वारा समाध बाबा बुड्ढा जी में नए बने दीवान हाल का भी शुभारंभ किया। इसकी कार सेवा तरनतारन वाले बाबा जगतार सिंह द्वारा की गई है। इसी दौरान भाई लौगोवाल ने गुरुद्वारा तप स्थान बाबा बुड्ढा जी में लंगर हाल का नींव-पत्थर रख कर कार सेवा की आरंभता की। गुरुद्वारा श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब (भाई सुक्खा जी) की नई इमारत बनाने की आरंभता भी करवाई। उन्होंने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब पब्लिक सीनियर सेकंडरी स्कूल की इमारत की पहली मंजिल का उद्घाटन भी किया। उन्होंने स्कूल की इमारत की रंगाई करवाने और स्कूल के लिए ग्राउंड बनाने का एलान भी किया। उन्होंने बाबा जगतार सिंह तरनतारन वालों की तरफ से निभाई जा रही कार सेवा और स्कूल-प्रिंसीपल बीबी अमनदीप कौर द्वारा प्रशासनिक परिपक्वता के साथ की जा रही सेवा की प्रशंसा की।

इस अवसर पर शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के सदस्य जत्येदार अमरीक सिंह विछोआ, स. कुलदीप सिंह तेड़ा, बाबा जगतार सिंह तरनतारन वाले, बाबा गुरमीत सिंह, जत्येदार मोहन सिंह मटिया, अतिरिक्त सचिव स. दिलजीत सिंह, स. सुखदेव सिंह भूरा कोहना, निजी सहायक स. जगजीत सिंह जग्गी, स. हरजिंदर सिंह मैनेजर गुरुद्वारा समाध बाबा बुड्ढा जी आदि उपस्थित थे।

की तरफ से गुरु-घरों के लंगर पर जी. एस. टी. संबंधी दिए बयान को गुमराहकुन करार दिया है। वर्णनयोग्य

है कि आम बजट के बाद केंद्रीय वित्त मंत्री का यह बयान आया है कि गुरुद्वारा साहिबान के अंदर छकाए जाते लंगर पर किसी किस्म का टैक्स नहीं लगाया जाता। शिरोमणि गु प्र कमेटी के प्रधान भाई गोबिंद सिंह लौगोवाल ने श्री जेतली के इस बयान को तथ्यों से कोसों दूर बताया है। कार्यालय शिरोमणि गु प्र कमेटी से जारी एक बयान के माध्यम से शिरोमणि गु प्र कमेटी के प्रवक्ता स. दिलजीत सिंह ने भाई गोबिंद सिंह लौगोवाल के हवाले से कहा कि केंद्रीय वित्त मंत्री का बयान सही नहीं है। उन्होंने कहा कि श्री अरुण जेतली कह रहे हैं कि गुरुद्वारा साहिबान के लंगर के लिए रसद पर जी.एस.टी. नहीं है, जबकि वास्तव में ऐसा नहीं है। उन्होंने कहा कि देश की सरकार में एक जिम्मेदार व्यक्ति का ऐसा बयान केंद्र सरकार की व्यवस्था पर प्रश्न-चिन्ह है। उन्होंने बताया कि जब से देश भर में जी.एस.टी. लागू किया गया है, तब

से ही गुरु-घर में लंगर के लिए खरीद की जाती रसद पर इस टैक्स का भुगतान किया जा रहा है। उन्होंने यह भी कहा कि शिरोमणि गु प्र कमेटी की तरफ से तब से लेकर अब तक इस टैक्स के विरुद्ध आवाज उठाई जा रही है और देश के प्रधान मंत्री, वित्त मंत्री सहित संसद सदस्यों को भी पत्र लिखे जा चुके हैं। उन्होंने कहा कि यदि लंगर पर जी.एस.टी. नहीं है तो सरकार की तरफ से इससे संबंधित सर्कुलर क्यों नहीं जारी किया गया। उन्होंने बताया कि अभी तक शिरोमणि गु प्र कमेटी को सरकार की तरफ से जी.एस.टी. हटाने संबंधी कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई। उन्होंने कहा कि वित्त मंत्री के बयान से स्थिति जटिल बन गई है और यदि सचमुच ही सिक्खों धार्मिक स्थानों को इस टैक्स से मुक्त किया गया है तो वित्त मंत्री को इसकी लिखित तौर पर सूचना जारी करनी चाहिए।

जगदीश टाइटलर को तुरंत गिरफ्तार किया जाए : भाई लौगोवाल

श्री अमृतसर साहिब : ५ फरवरी : सन् १९८४ में दिल्ली में हुए सिक्ख कत्लेआम के समय राजीव गांधी के साथ गाड़ी में बैठ कर प्रभावित इलाकों का दौरा करने के बयान के बाद अब जगदीश टाइटलर की सामने आई वीडियो में उसके द्वारा एक सौ सिक्खों को कत्ल करवाने के इकबाल के आधार पर उसे तुरंत गिरफ्तार करना चाहिए। यह मांग करते हुए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रधान भाई गोबिंद सिंह लौगोवाल ने कहा कि जब टाइटलर ने खुद यह कबूल कर लिया है कि उसने सौ सिक्खों का कत्ल करवाया है तो इस पर और जांच या गवाहों की ज़रूरत नहीं रहनी चाहिए। उन्होंने देश की सुप्रीम कोर्ट से अपील की कि जगदीश टाइटलर को उसी के बयान के आधार पर गिरफ्तार कर सिक्ख कत्लेआम का दोषी मानते हुए सख्त से सख्त सज़ा दी जाए।

भाई गोबिंद सिंह लौगोवाल ने कहा कि दुखद पहलू यह है कि ३४ वर्ष बीतने के बाद भी

सिक्ख कत्लेआम के दोषियों को सज़ा नहीं मिल सकी और कत्लेआम के पीड़ित लोग न्याय के लिए दर-दर की ठोकें खा रहे हैं। उन्होंने कहा कि कांग्रेस जमात ने सिक्खों का कत्लेआम करने वालों की हमेशा पुश्तपनाही की है। जगदीश टाइटलर, सज्जन कुमार और एच.के.एल. भगत जैसे व्यक्तियों के विरुद्ध आज तक कोई कार्यवाही नहीं हुई, बल्कि सिक्खों को चिड़ाने के लिए इन लोगों को उच्च ओहदे दिए जाते रहे हैं। उन्होंने कहा कि आज टाइटलर सामने आई वीडियो के माध्यम से न्यायपालिका को भी चुनौति दे रहा है। भाई लौगोवाल ने कहा कि अब तो कोई बात छिपी नहीं रह गई, झूठ से पर्दा उठ गया है और सत्य सबके सामने आ गया है। उन्होंने कहा कि अब जगदीश टाइटलर को गिरफ्तार करने के लिए सरकार और पुलिस प्रशासन को ईमानदाराना पहुंच अपनानी चाहिए, जिससे पीड़ितों के हृदय शांत हो सकें।

